ओ३म्

सनातन धर्म

लेखक

गंगाप्रसाद उपाध्याय

आर्य प्रकाशन

८१४ कूण्डे वालान, अजमेरी गेट, दिल्ली

Scanned by CamScanner

प्रकाशक
तिलकराज आर्य
अध्यक्ष
आर्य प्रकाशन
८१४ कूण्डेवालान,
अजमेरी गेट, दिल्ली-६
दूरभाष : ३२३३२८०

संस्करण : १९९७
संस्करण 2007

मूल्य: पन्द्रह रुपये

शब्द संयोजक :
पूजा लेज़र प्रिन्टर्स,
१/११५७८ सुभाष पार्क (एक्स०)
नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२
दूरभाष : (कार्या०) २११८५३६ (नि०) २२८५३२४, २२८२९५६

मुद्रक :

Scanned by CamScanner

पहली सभा

धर्म क्या है? उस पर कैसे चला जावे?

धर्मनगर के ब्रह्माश्रम में एक सभा हुई। इसमें भारतवर्ष के मुख्य-मुख्य सम्प्रदायों के प्रतिनिधि उपस्थित हुये। इसका प्रधान पद महात्मा सुनीतिकेतु जी ने ग्रहण किया।

जब सब सदस्यगण अपने-अपने आसन पर बैठ गये तो श्री प्रधान जी ने अपनी प्रारम्भिक वक्तृता देनी आरम्भ की—

'देवियो और सज्जनो! आज का दिन बड़ा शुभ है कि आप सब एक महान् विचार को लेकर एकत्रित हुये हैं। यह वह युग है जिसमें मानव जाति धर्म से पदच्युत होकर अधर्म की ओर जा रही है। ईश्वर पूजा का स्थान धन-लोलुपता ने ले लिया है। मानव दानव बन रहा है। दया की प्रवृत्ति को छोड़ कर लोग हिंसा के प्रेमी बन रहे हैं। दीनों और गौ आदि पशुओं पर वज्रपात हो रहा है। भारत की प्राचीन संस्कृति लुप्तप्राय हो चली है। आज हमको विचार करना है कि इस कुटिल रोग से जगत् का किस प्रकार त्राण किया जाय? हमारा नीति शास्त्र कहता है कि—

धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद् धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतो ऽवधीत्॥

चुनुआ कहार—महाराज! हम नहीं समझे। आपने संसकीरत

Scanned by CamScanner

(संस्कृत) में क्या कहा?

प्रोफेसर विज्ञान भिक्षु जी—भाई, बीच में टोकना नहीं चाहिये। यह सभा सोसायटी के निमय के विरुद्ध बात है। महात्मा जी स्वयं स्पष्ट कर देंगे।

महात्मा जी—मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि मारा हुआ धर्म मनुष्यों को मार डालता है। और रक्षा किया हुआ धर्म मनुष्यों की रक्षा करता है। हमको चाहिये कि धर्म की हत्या न करें। कहीं ऐसा न हो कि मरा हुआ धर्म मनुष्य को नष्ट कर डाले।

स्वामी सनातनानन्द जी—सत्य वचन महाराज! जो आप कहते हैं सो ऐसा ही है। हमको धर्म पर चलना चाहिये।

मौलवी रहीम बख्श—स्वामी साहब ने क्या फरमाया? क्या धर्म कोई शेर है जो हमको खा जायगा?

मंगलदास—मोलवी साहिब! आप समझे नहीं। धर्म का अर्थ है, मजहब, दीन। महात्मा जी का तात्पर्य ऐसा है कि अपने दीन पर पक्की तरह चलना चाहिये।

मौ० र० ब०—हाँ ठीक है। मैं समझ गया।

महात्मा जी—हम आज यही तो विचार करने चले हैं कि धर्म क्या है और उस पर कैसे चला जाय?

मौ० र० ब०—बजा फरमाते हैं जनाब! हमारे रसूल ने फरमाया है कि जो मनुष्य अल्लाह के दीन पर नहीं चलता और रसूल की हिदायत को कबूल नहीं करता वह काफिर है और उसे जहन्नुम की आग में जलना पड़ेगा।

पादरी डैविड पाल—देखिये! हम भी तो यही कहते हैं। खुदा के इकलौते बेटे ईसा ने हम सबके पापों को हरने के लिये अपने

Scanned by CamScanner

को सूली पर चढ़ा दिया। प्रभु ईसा मसीह हमको स्वर्ग का मार्ग बताने आया था। देखिये हमारे सामने दो मार्ग हैं। एक मार्ग का प्रदर्शक ईसा मसीह है। उस मार्ग पर चलने से स्वर्ग की प्राप्ति होगी। दूसरा मार्ग नीचे की ओर ले जाता है। यह नरक का मार्ग है और शैतान इस मार्ग का नेता है।

चम्पो—तो क्या हम ईसाई हो जाँय? ऐसा कदापि नहीं होने का। ईसाई तो सबके हाथ का छुआ खा लेते हैं। हमको ऐसा भ्रष्टाचार ठीक नहीं लगता।

महात्मा जी—आप लोग तो अभी से कोलाहल करने लगे। जितने मुँह उतनी बातें। फिर धर्म का निर्णय कैसे होगा? हम सबको शान्ति से विचार करना चाहिये। धर्म की गति बड़ी गहन है। धर्म को समझना कठिन है। धर्म पर चलना तलवार की धार पर चलना है।

जगतपाल सेठ—महात्मा जी! आज हम इसी का निर्णय करने आये। हम बाल की खाल क्या निकालें। हम तो सनातन धर्मी हैं। बाप दादों से जो रीति चली आई है उसी पर चलते हैं। हमारे बाबा ने हनुमान जी का मन्दिर बनवाया था। हम नित्य वहाँ दर्शन करने जाते हैं। हर पूर्णमासी को गंगा स्नान करते हैं और जो कुछ बन पड़ता है दान-दक्षिणा देते हैं। हमारे घर में ब्राह्मण रसोई बनाता है। हम किसी अन्य जाति का छुआ नहीं खाते। हम तो अस्पताल की दवा भी नहीं खाते। क्योंकि अस्पताल में तो सातों जात के लोग काम करते हैं। हम धर्म की हत्या नहीं करते। ठीक है न महात्मा जी!

महात्मा जी—सेठ जी! बैठ जाइये। हम आपकी बात पर ही

Scanned by CamScanner

विचार करेंगे।

पं० सनातनानन्द जी—महाराज! सनातन धर्म वही है जो बाप दादों से चला आया है। उसी पर चलना चाहिये।

पं० सुधासिन्धु—बाप-दादों से क्या चला आया और क्या नहीं चला आया? यह एक टेढ़ा प्रश्न है। क्या सनातन धर्म वही है जिसका सेठ जी ने बखान किया है? क्या हनुमान जी की पूजा सदा से चली आई है? हनुमान जी तो रामचन्द्र जी के युग में हुये थे। क्या रामचन्द्र जी के परदादे महाराज रघु भी हनुमान जी की पूजा किया करते थे?

पं० सनातनानन्द जी—भाई सुधासिन्धु जी! तुम तो आर्य हो गये हो। तुम सनातन धर्म को क्या जानो? स्वामी दयानन्द तो सनातन धर्म के कट्टर शत्रु थे। वह न देवी को मानें न देवता को मानें। वे तो देवताओं को पत्थर बताते हैं। सनातन धर्म का तो उसी दिन से सत्यानाश हो गया जिस दिन से स्वामी दयानन्द आये।

पं० सुधासिन्धु जी—देखिये महाराज! पण्डित जी को ऐसी अनर्गल बातें नहीं करनी चाहिये। आपने स्वामी दयानन्द की पुस्तकों का अध्ययन नहीं किया। पण्डों, पुजारियों की सुनी-सुनाई मान बैठे हैं। देखिये स्वामी दयानन्द क्या कहते हैं?

प्रो० विज्ञान भिक्षु—जी, बताइये! स्वामी दयानन्द क्या कहते हैं?

पं० सुधासिन्धु—सुनिये—

(१) सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में स्वामी दयानन्द लिखते हैं—"अन्त में आर्यों के 'सनातन' वेद विहित 'मत' की विशेषतः व्याख्या लिखी है जिसको मैं भी यथावत् मानता हूँ।"

Scanned by CamScanner

(२) सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् साम्राज्य, सार्वजनिक धर्म जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं, और मानेंगे भी। इसीलिये उनको 'सनातन' नित्य धर्म कहते हैं। (देखो, स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश का आरम्भिक वाक्य।)

महात्मा जी—पं० सुधासिन्धु जी ठीक कहते हैं। आर्य समाजी भी सनातन धर्मी ही हैं। आपस में झगड़ा करके साम्प्रदायिकता पर बल देना ठीक नहीं। इससे कलह बढ़ती है। मौलिक प्रश्न यह है कि सनातन धर्म है क्या वस्तु। शास्त्र कहता है कि—

लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तु-सिद्धिः।

वस्तु का निर्णय 'लक्षण' और 'प्रमाण' से होता है। पहले यह देखना चाहिये कि 'सनातन धर्म' का लक्षण क्या है? जब लक्षण का स्पष्टीकरण हो जाय तो प्रमाणों से सिद्ध करना होगा कि यह लक्षण कहाँ घटता है, कहाँ नहीं।

प्रोफेसर विज्ञान भिक्षु—महात्मा जी ने ठीक कहा। यह विज्ञान का युग है। हम वैज्ञानिक लोग भी इसी प्रकार अन्वेषण करते हैं। देखिये, वैज्ञानिक लोग नित्य-प्रति नई नई परीक्षायें करते रहते हैं। परीक्षण कर्त्ता लोग परस्पर लड़ते नहीं। हमारे परीक्षण स्वयं बता देते है कि अमुक सिद्धान्त ठीक है या नहीं। यदि परीक्षण द्वारा कोई सिद्धान्त खंडित हो जाता है तो त्याग देते हैं। धर्म-सम्प्रदायों में इससे विपरीत होता है। इसी से विद्वान् लोग धर्म के नाम से चिढ़ते हैं। आजकल धर्म का नाम है साम्प्रदायिकता। आज जो यह सभा बैठी है उसमें इस दोष से बचना होगा। हमने आज ऐसे सभापति का आश्रय लिया है जो यथा नाम तथा गुण हैं। आशा है हमारा उद्योग सफल होगा।

Scanned by CamScanner

महात्मा—इस शुभ काम में आप सबका सहयोग अपेक्षित है। सभी से मिलकर सभा बनती है। एक पुरुष सभा नहीं बनाता—

न सा सभा यत्र न भाति कश्चित्।
न सा सभा यत्र विभाति ह्येकः॥
सभा तु सैवास्ति यथार्थरूपा।
परस्परं यत्र विभान्ति सर्वे॥

पं० सनातनानन्द—साधु साधु।

महात्मा—अच्छा! मेरा प्रस्ताव है कि आज की सभा विसर्जित हो। चार दिन के पीछे हम सब मिलें। और इस काल में स्वयं विचार करें कि सनातन धर्म क्या है? स्वयं सोचें, शास्त्रों का अध्ययन करें। परस्पर परामर्श करें। और अगली सभा में अपने परिपक्व विचार उपस्थित करें। विषय गम्भीर है। सभा विसर्जित होती है।

❖❖

Scanned by CamScanner

दूसरी सभा

'सनातन' के लक्षण

आजं सभा की दूसरी बैठक है। आज लोगों में अधिक उत्साह भी है और स्त्री-पुरुष दोनों की उपस्थिति भी अधिक है। महात्मा सुनीतिकेतु जी के शुभागमन का जनता ने मानपूर्वक स्वागत किया और महात्मा जी ने सब से पूर्व एक मन्त्र से कार्यवाही आरम्भ की—

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि। (यजुर्वेद १। ५)

हे ज्ञान स्वरूप परमात्मन्! हम जो व्रत करते हैं उसका पालन आपकी सहायता से ही सम्भव है। आज हम व्रत कर रहे हैं। आप ऐसी कृपा करें कि हमारा यह व्रत पूरा हो। और वह व्रत यह है कि असत्य को छोड़कर सत्य को ग्रहण करें।

मौलवी रहीम बख्श जी—वाह? क्या खूब कहा! कुरान शरीफ में भी अल्लाह ताला फ़रमाता है 'जाअल इक्को। वह जहक़ल बातिलो।' जब सचाई आती है तो झूठ भाग जाता है।

श्रीमती मनोरमा जी—महाराज! क्या मैं कुछ पूछ सकती हूँ?

महात्मा—अवश्य पूछिये!

श्रीमती मनोरमा जी—धर्म सबके लिये एक ही है या अलग अलग। मुसलमानों का अलग, हिन्दुओं का अलग, ईसाइयों का

Scanned by CamScanner

अलग।

पं० सनातनानन्द जी—हमने तो ऐसा सुना है कि—

'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना।'

हर मनुष्य को अपने-अपने धर्म पर पक्का रहना चाहिये। जो अपने धर्म को छोड़कर दूसरों के धर्म को ग्रहण करता है, वह ठीक नहीं करता। गीता में भगवान कृष्ण उपदेश देते है—

स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मे भयावहः।

पादरी डैविड पाल—श्रीमान् जी, हमारा विचार तो ऐसा नहीं है। सच्चा धर्म तो एक ही है। वह है ईसाई धर्म! इसीलिये हम संसार भर को अपने धर्म का निमन्त्रण देते हैं। संसार में ऐसा तभी हो सकता है जब सब एक मत के हो जायँ।

मौ० रहीम ब०—जनाब! हमारे रसूल ने भी यही फरमाया है कि अल्लाह का धर्म एक है। सबको उसी धर्म का ग्रहण करना चाहिये।

पं० सुधासिन्धु—हम भी ऐसा ही मानते हैं वेद में लिखा है—

नान्यः पन्थाः विद्यतेऽयनाय।

मुक्ति पाने का एक ही रास्ता है। दो बिन्दुओं के सबसे समीपस्थ मार्ग को सरल रेखा कहते हैं। सरल रेखा एक ही खिंच सकती है, शेष सभी रेखायें कुटिल होंगी। यथार्थ धर्म भी एक ही है। शेष कुटिल हैं या जटिल।

श्रीसनातनानन्द जी—ईश्वर केन्द्र है। समस्त संसार परिधिवत है। यह तो साधारण विद्यार्थी भी जानता है कि परिधि के सब बिन्दु केन्द्र से समान दूरी पर होते हैं। हमारे सब के हृदय में भगवान है। भगवान हम सब से बराबर दूरी पर है। आप किसी धर्म पर

Scanned by CamScanner

चलिये, भगवान मिल जायेंगे।

पादरी डैविड पाल—ऐसा तो आप ही मानते हैं। किसी धर्म के आचार्य ने ऐसा नहीं माना। अन्यथा वह दूसरे धर्मों का खंडन और अपने ही धर्म का मण्डन न करते और धर्म के प्रचार में संलग्न होते। ईसू मसीह ने न्यूटैस्टेमेण्ट (नव विधान) का क्यों प्रचार किया? महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म की स्थापना क्यों की? स्वामी दयानन्द ने आर्य समाज क्यों स्थापित किया? और अन्य सनातनी लोग आर्य समाज का क्यों विरोध करते हैं? हजरत मुहम्मद को इस्लाम के चलाने की क्या आवश्यकता थी? इन सब बड़े पुरुषों के कथन से इतना तो स्पष्ट ही है कि धर्म एक ही है, अनेक नहीं।

पं० सुधासिन्धु जी—श्री पं० सनातनानन्द जी ने वृत्ति की परिधि का दृष्टान्त देकर हम सबको चकित कर दिया। परन्तु दृष्टान्त है विषम, इसमें साध्यसम दोष है। जब तक यह बात सिद्ध न हो जाय कि हम सब ईश्वर से बराबर दूरी पर हैं उस समय तक परिधि और केन्द्र की उपमा नहीं दे सकते। हम नहीं देखते की एक महापातकी या अज्ञानी पशु ज्ञान की अपेक्षा से ईश्वर के उतने ही निकट है जितना एक तपस्वी ऋषि। देश और काल की अपेक्षा से निकट होते हुये भी ज्ञान की अपेक्षा से दूर है। धर्म और उपासना का विषय है ज्ञान की अनुभूति, न कि देश और काल की समीपता। देखिये! समग्र वृत्त में केन्द्र तो एक ही होता है परन्तु इसके अतिरिक्त अनेक बिन्दु होते हैं जिनकी केन्द्र की दूरी समान नहीं होती और वे अन्यान्य परिधियों पर स्थित होते हैं। केन्द्र एक होते हुये भी अर्द्ध व्यास अलग-अलग होते हैं। एक योगी और एक लम्पट दोनों एक ही परिधि पर नहीं होते। एक हिंसक और एक अहिंसक सम

Scanned by CamScanner

दूरी पर नहीं हैं। नित्य ईश्वर से डरने वाला और धर्म पर चलने वाला ईश्वर से उतनी दूर नहीं है जितना वह मनुष्य है जो किसी नियम का पालन नहीं करता।

चुनुआ कहार—पं० सुधासिन्धु जी! हम तो एक अक्षर भी नहीं समझे। हम केन्द्र वेन्द्र क्या समझें? आप तो कालेज में पढ़ाने लग गये।

पं० सुधासिन्धु—भाई! पण्डित जी ने प्रश्न ही गणित का छेड़ दिया। अतः मुझे भी उसी प्रकार का हेतु देना पड़ा। यह तो सभी जानते हैं कि सब धर्म एक नहीं हैं? क्या तुम ईसाई धर्म को पसन्द करते हो?

चुनुआ—नहीं महाराज! हम ठहरे हिन्दू। हम किरिष्टान नहीं हैं।

महात्मा जी—आप लोग 'धर्म' और 'सनातन धर्म' के लक्षण कीजिये। फिर यह झगड़ा अपने आप सुलझ जायेगा।

पं० सनातनानन्द जी—सज्जनो! 'सनातन' शब्द संस्कृत के दो शब्दों से बना है। 'सना' का अर्थ है 'सदा' (हमेशा)। 'सना' में 'तन' प्रत्यय लगने से 'सनातन' शब्द सिद्ध होता है अर्थात् वह धर्म सनातन धर्म है जो सदा से चला आया है और सदा रहेगा। इसीलिये तो हम कहते हैं कि अपने बाप-दादों के धर्म पर चलना चाहिये। यही सनातन धर्म है। इन आर्य समाजियों को तो अभी सौ वर्ष भी नहीं हुये। इन्होंने अपने बाप-दादों की चाल छोड दी। न शिव जी को मानें, न गंगा जी को। अपने मां-बाप का श्राद्ध तक भी छोड़ दिया। यह कैसे सनातन धर्मी?

सेठ जगतपाल जी—ठीक कहा, महाराज! हमारे बाबा के जमाने

Scanned by CamScanner

में तो एक भी आर्य नहीं था। हम सब सनातनी थे।

महन्त रामानन्द—ठीक है। ठीक है। हमारे गुरु की गद्दी भी बहुत पुरानी है।

पं० सुधासिन्धु—पुरानी है या सनातन। पं० सनातनानन्द जी ने शब्दार्थ तो ठीक किया है परन्तु लक्षण नहीं किये। सौ-दो सौ वर्ष पुरानी चीज भी कभी तो नई रही होगी। थोड़ा सा समझिये। कल्पना कीजिए कि एक धर्म की स्थापना सम्वत् ११९६ में हुई। उस समय तो वह नया हो रहा होगा। आज उसको आठ सौ वर्ष पुराना कह सकते हैं। पुरातन और सनातन दो अलग-अलग शब्द हैं। सनातन धर्म वह है जो सदा एक सा रहे। बदले नहीं। जो पहले नया था अब पुराना हो गया वह सनातन नहीं है। महन्त रामानन्द जी की गद्दी सनातन नहीं। उसको पुरानी या पुरातन कह सकते हैं। पुरातन चीज अच्छी भी हो सकती है और बुरी भी। परन्तु सनातन धर्म एक सा रहता है।

प्रो० विज्ञान भिक्षु जी—विषय बड़ा मनोरंजक है और गम्भीर भी। पं० सुधासिन्धु जी! अधिक स्पष्ट कीजिये। आपने बात तो ऐसी कही है कि जी को चुभ जाती है।

पं० सुधासिन्धु जी—श्रीमान् जी! मैं अपनी ओर से नहीं कह रहा। मैं वेदों की बात कहता हूँ। वेद में सनातन धर्म के लक्षण किये हैं।

श्री अश्वकेतु जी—हाँ! वेद की बात हम भी सुनना चाहते हैं।

Scanned by CamScanner

पं० सुधासिन्धु जी—

सनातनमेनामाहुरुताद्य स्यात् पुनर्णवः।
अहोरात्रे प्रजायेते अन्यो अन्यस्य रूपयोः॥

(अथर्ववेद काण्ड १०, सूक्त ८, मन्त्र २३)

इस मन्त्र में 'सनातन' का शब्द भी है। 'सनातन' के लक्षण भी हैं और दृष्टान्त भी है।

'सनातन' उसको कहते हैं जो नित्य नया हो। कभी पुराना हो ही न। जैसे रात और दिन का प्रवाह। दिन के पीछे रात आती है और रात के पीछे दिन। हर दिन एक दूसरे रूप का होता है। हर रात एक दूसरे के रूप की होती है। यह दिन रात नित्य नये रहते हैं।

मलूक दास—दिन रात और धर्म से क्या सम्बन्ध?

पं० सुधासिन्धु जी—जैसे दिन रात का प्रवाह नित्य-नया और सनातन है, इसी प्रकार वस्तुओं के धर्म भी सनातन हैं। आग का धर्म है जलना। यह सनातन है। पानी का धर्म है बहना। यह सनातन धर्म है। दो और दो चार होते हैं यह सनातन नियम है। चाहे विज्ञान कितनी ही उन्नति कर ले, दो और दो कभी पाँच या तीन न होंगे। गणित के जितने नियम हैं सब सनातन हैं। सरलकोण सदा ९० अंश का होता है। कभी घट-बढ़ नहीं सकता। वृत्त की परिधि और व्यास का अनुपात सदा २२ : ७ का होता है, यह सनातन नियम है। हाइड्रोजन और आक्सीजन के अणुओं को २ और १ के अनुपात से मिलाने से पानी बनता है। अन्यथा नहीं। यह सब नियम सनातन हैं। इसी प्रकार सत्य भाषण मनुष्य का सनातन धर्म है। कभी अन्यथा नहीं हो सकता। ईश्वर की सत्ता सदा एक रस रहती है बदलती

Scanned by CamScanner

नहीं। वह सनातन है। जीव और ईश्वर का सम्बन्ध भी सनातन है बदलता नहीं।

वेद ने सनातन धर्म के लक्षण बता दिये। अब आप इसी कसौटी पर कसते जाइये। जिस कार्य में यह लक्षण लक्षित होते हों वह सनातन धर्म है।

महात्मा जी—आज की वार्ता तो बड़ी लाभदायक रही।

आप सब इस पर विचार करें। आज के लिये इतना भोजन पर्याप्त है। केवल कथन या श्रवण ही पर्याप्त नहीं है। मनन और ऊहापोह की आवश्यकता है। यह निर्णय कीजिये कि अगली बैठक कब हो?

कुछ कहने सुनने के पश्चात् यह निश्चित हुआ कि अगली बैठक पाँच दिन पीछे होनी चाहिये।

इसके उपरान्त सब अपने-अपने घरों को चल दिये। मार्ग में सब का ध्यान वेदों के बताये लक्षण की ओर था।

❖❖

Scanned by CamScanner

तीसरी सभा

नया युग नया धर्म

तीसरी बैठक के दिन समय से आध घंटे पूर्व ही बहुत से सज्जन तथा देवियाँ सभास्थल पर एकत्रित हो गईं। श्री महात्मा सुनीतकेतु जी के आने में कुछ विलम्ब था। लोगों में ऊहापोह का उत्साह उमड़ रहा था। कोई कहते थे कि सनातन धर्म का यह लक्षण बहुत ही अपूर्व है। हमने तो कभी ऐसा सोचा नहीं था। कुछ यह भी सोच रहे थे कि इस लक्षण की कसौटी पर हमारी मान्यतायें ठीक भी उतरेंगी या नहीं। इस्लामी प्रतिनिधियों का ऐसा विचार था कि क्यों न इस लक्षण पर ही आपत्ति उठाई जाय? क्या धर्म सदा एक सा ही रहता है। हर वस्तु उन्नति की ओर जाती है। नित्य नये-नये आविष्कार होते हैं। आरम्भ में मनुष्य जंगली और अशिक्षित थे। उनका धर्म भी बालकोपयोगी था। अब जगत् संवृद्ध हो गया है। इस विकसित संसार में पुरानी सड़ी हुई सभ्यता से क्या काम चलता है। हम धर्म के 'सनातन' लक्षणं को स्वीकार नहीं करते।

इतने में सभापति जी आ गये। उन्होंने ताड़ लिया कि आशंकाओं की गति किस ओर जा रही है। इसलिये पदासीन होते ही उन्होंने कहा—

सद् गृहस्थियो तथा उपस्थित वृन्द ! क्या आपने श्री सुधासिन्धु जी के निर्दिष्ट वेद मन्त्र तथा 'सनातन' के लक्षणों पर विचार किया?

Scanned by CamScanner

मौ० र० ब०—जनाब! मुझे कुछ अर्ज करना है।

महात्मा जी—जरूर फरमाइये।

मौलवी र० ब०—मैं संसकीर्त तो जानता नहीं। परन्तु जमाना रंग बदलता है। कभी कुछ है कभी कुछ है। विकासवादी वैज्ञानिक भी यही कहते हैं कि जगत् ने शनैः शनैः विकास किया है। हमारे पैगम्बर साहब अन्तिम देवदूत (पैगम्बर) थे। हमारी कुरान भी अल्लाह का अन्तिम कलाम है। जैसे एक शासक के बदलने पर पुराना शासक हट जाता है और उसकी हुकूमत भी समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार जब कुरान शरीफ आया और हजरत मुहम्मद साहब अन्तिम रसूल आये तो पुराने सभी धर्म स्थगित हो गये। क्योंकि मानव जगत् उन्नत हो गया। 'नया युग नया धर्म' आप उसको सनातन धर्म कहें या न कहें। सच्चा धर्म तो वही है जो नये युग के अनुकूल हो।

श्री सनातनानन्द जी—कुछ-कुछ लगता तो हमको भी ऐसा ही है। श्री सुधासिन्धु के लक्षणों से तो हमको विरोध नहीं। परन्तु सतयुग और कलियुग के धर्मों में तो अवश्य भेद है। जाड़े में आग तापते हैं और गर्मी में बर्फ का सेवन करते हैं।

महन्त रामानन्द—कुछ समझ में नहीं आया। श्री सुधासिन्धु जी ! क्या आप कुछ अधिक प्रकाश डालेंगे ?

पं० सुधासिन्धु जी—अवश्य! मुझे आश्चर्य है कि श्री सनातनानन्द जी का मन कैसे डगमगा गया? वे तो सनातन धर्मी हैं और पुरानी प्रथाओं के कट्टर पक्षपाती। संसार की चीजें घटती बढ़ती हैं परन्तु प्रवाह तो सनातन ही रहता है। मौलिक नियम तो नहीं बदलते। मनुष्य की बुद्धि और उसकी कृतियों में विकास होता

Scanned by CamScanner

है परमात्मा तो सर्वज्ञ है। मनुष्य की कृतियों में हम विकास देखते हैं जैसे मिट्टी के दीये के स्थान में आज विद्युत दीपक बन गये हैं। परन्तु ईश्वर का बनाया हुआ सूर्य तो पहले भी वैसा ही था। हम यह नहीं कह सकते कि आरम्भ में ईश्वर को सूर्य बनाना नहीं आता था। उसने परीक्षण करते-करते सूर्य बनाना सीखा। या पहले जल-निर्माण के नियम अलग थे। वैज्ञानिक लोग उन्हीं नियमों का पता चलाते हैं जो नित्य हैं और सार्वदेशिक हैं। वेद में तो यहाँ तक कह दिया कि—

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।

(ऋग्वेद मण्डल १०, सूक्त १९०, मन्त्र ३)

अर्थात् न केवल इस सृष्टि में ही ईश्वरीय नियम एक है, अपितु सृष्टियों का जो नित्य प्रवाह चला आ रहा है उसके नियम भी एक हैं। सनातन हैं। रात और दिन का दृष्टान्त देकर यह बात स्पष्ट कर दी गई। सृष्टि के आरम्भ में जो मनुष्य जन्म लेते हैं उनमें सभी अज्ञ नहीं होते। उनको सिखाने वाले ऐसे ऋषि मुनि भी जन्म लेते हैं जो पूर्व कल्पों में पूर्ण विकसित हो चुके हैं। परीक्षण और विकास मानवी वस्तुओं में होता है। ईश्वर निर्मित में नहीं। उपनिषद् कहती है—

पूर्ण मदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमित्युच्यते।

ईश्वर पूर्ण है। जगत् पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण की उत्पत्ति हैंमनुष्य को सीखना पड़ता है। ईश्वर को सीखना नहीं पड़ता। मौलवी साहब! आप भी तो ईश्वर को सर्वज्ञा और पूर्ण (आलिम और कामिल) मानते हैं। क्या ईश्वर का भी कोई उस्ताद है जो धीरे-धीरे उसको पाठ पढ़ाता हो?

Scanned by CamScanner

मौ० र० ब०—लाहौल०! ऐसा कुफ्र कौन मान सकता है?

श्री सुधासिन्धु जी—अच्छा मौलवी साहब! आपका कहना है कि कुरान सबसे पूर्ण इलहाम है। पहले का इलहाम निचले दर्जे का था क्योंकि मनुष्य की सभ्यता का स्तर इतना ऊँचा नहीं हो पाया था। क्या यह बात सच है कि मुहम्मद साहेब के समय में अरब के लोग अन्य देशों या युगों की अपेक्षा सबसे ऊँचे स्तर पर थे। क्या आप नहीं मानते कि अरब के लोग अन्य देशों की अपेक्षा अधिक पिछड़े हुये थे? इससे तो सिद्ध होता है कि कुरान का उपदेश पिछड़ी जाति के अनुकूल था। न कि अधिक विकसित लोगों के अनुकूल। और क्या भविष्य में मानव जाति उसी स्तर पर रहेगी जिस पर अरब के लोग पहली शताब्दि हिजरी में थे? यदि धर्म भी मनुष्य जाति के स्तर के अनुसार ऊँचा या नीचा होता रहे तो कुरान को भी बदलना पड़ेगा। ईश्वर सनातन है और उसके नियम भी सनातन हैं। अतः धर्म भी सनातन होना चाहिये। जाड़े में आग तापने और गर्मी में बर्फ का दृष्टान्त दूषित है। आचार के नियम तो जाड़े गर्मी दोनों में एक से रहते हैं। सच बोलना सभी युगों में श्रेष्ठ है। पाप और पुण्य के नियम सतयुग और कलियुग सभी युगों में समान हैं। मानवी प्रथाओं और धार्मिक नियमों में भेद हैं। जाड़े में कोई कोट पहनते हैं कोई अचकन। कभी टाट ओढ़ा जाता है। कभी रेशमी शाल। परन्तु चाहिये कोई गर्मी लाने वाला साधन। क्या मौलवी साहेब यह बताने का कष्ट करेंगे कि हजरत मुहम्मद साहब के पूर्व पैगम्बरों को वह ज्ञान क्यों नहीं दिया गया जो मुहम्मद साहेब को दिया गया था ?

मौ० र० ब०—दिया तो था! परन्तु लोग भूल गये। खुदा ने

Scanned by CamScanner

जब आदम को बनाया तो सब नाम भी सिखा दिये। वही इलहाम था।

पं० सुधासिन्धु—तो उसमे पूर्ण ज्ञान था।

मौ० र० ब०—जी हाँ।

पं० सुधासिन्धु—वैसा ही जैसा कुरान शरीफ में।

मौ० र० ब०—जी हाँ!

पं० सुधासिन्धु—तो फिर कुरान की क्या आवश्यकता पड़ी।

मौ० र० ब०—मैं पहले कह चुका हूँ कि लोग भूल गये। ईसाइयों ने बाइबिल में अदला बदली (तहरीफ) कर दी।

पं० सुधासिन्धु—फिर आपके कहने भी धर्म तो सनातन ही हुआ। अर्थात् आदम से लेकर चला आता है। भूलता मनुष्य है। ईश्वर नहीं। क्या गारंटी है कि लोग आगे उस ज्ञान को न भूलेंगे जिसको कुरान में दिया गया है?

मौ० र० ब०—खुदा ने तकमील (पूर्णता) कर दी है। वह उसकी हिफाजत करता है और करेगा।

पं० सुधासिन्धु—फिर खुदा ने पहले ही क्यों ऐसा नहीं किया? क्या ईश्वर नहीं जानता था कि मनुष्य भूलें करता है? पहले भी करता था और भविष्य में भी करेगा।

महात्मा जी—सज्जनो! परस्पर वाद-विवाद करना उचित प्रतीत नहीं होता। यह रीति अन्वेषण की नहीं है। हमको धर्म की परीक्षा करनी है किसी विशेष मनुष्य अथवा जात के मन्तव्यों की नहीं।

पं० सनातनानन्द जी—महात्मा जी ठीक कहते हैं। आज का समस्त समय शास्त्रार्थ में गया।

प्रो० विज्ञान भिक्षु जी—शास्त्रार्थ से क्यों घबराना? यह तो

Scanned by CamScanner

विचार विनिमय है। मैं समझता हूँ कि श्री पण्डित सुधासिन्धु जी तथा मौलवी साहब के बीच जो बातचीत हुई वह न तो अनुचित थी न अनर्गल। जैसे सनातन धर्म को अपनी बात कहने का अधिकार है वैसे इस्लाम को भी।

चम्पो—पादरी साहब क्यों चुप बैठे हैं?

पादरी डैविड पाल—मैं तो सुन रहा हूँ। मौलवी साहब ने ईसाइयों पर जो चुपके से चोट की वह ठीक नहीं थी। हजरत ईसा तो खुदा के इकलौते बेटे थे। उनके बलिदान की साक्षी तो सभी को माननी है। उनके बाद पैगम्बर नहीं आयेगा।

सेठ जगतपाल—आज तो बहुत रात हो गई। अब सभा विसर्जित होनी चाहिये।

महात्मा सुनीतकेतु जी—हाँ ठीक है! अब सभा की आज की बैठक समाप्त है।

Scanned by CamScanner

चौथी सभा

ईश्वर उपासना

आज सभा की चौथी बैठक है। दिन प्रतिदिन उत्साह बढ़ता जाता है। नये-नये भाव, नई-नई युक्तियाँ सामने आ रही हैं। जो लोग केवल कुछ दैनिक रूढ़ियों को ही धर्म समझ बैठे थे और केवल इतना ही जानते थे कि मन्दिर के सामने से निकलो तो हाथ जोड़ लो और किसी प्रकार की ननुनच न करो वह भी सोचने लगे कि अमुक विचार क्यों ठीक है। क्यों नहीं। चम्पो ने तो बुढ़िया स्त्रियों से इतना ही सुन रखा था कि धर्म दो ही हैं। एक हिन्दू और दूसरा मुसल्मान। उसके मुहल्लों में एक ललाइन रहा करती थीं। वह कहती थी कि धर्म तो दो ही हैं, हिन्दू और मुसल्मान। सैकड़ों वर्षों से हम ऐसा ही सुनते आये हैं। यह तीसरे आर्य कहाँ से टपक पड़े? चम्पो के मन में भी कुछ विचार उठने लगे। उसने सबसे पहले उठ कर कहा—

महाराज! मैं तो यही सुना करती थी कि धर्म दो हैं एक हिन्दू, दूसरा मुसल्मान। हिन्दू मन्दिरों मे पूजा करते हैं। मुसल्मान महजत में नमाज पढ़ते हैं। किरिष्टान सुने तो थे परन्तु यह पता नहीं था कि किरिष्टान भी कोई धर्म हैं।आर्य तो बिलकुल नये हैं। हमारे पुरनियों ने भी आर्यों का नाम नहीं सुना। जयराम, जय कृष्ण जी, सलाम, बन्दिगी तो सुनने में आते थे। यह 'नमस्ते' क्या चीज है?

Scanned by CamScanner

हमारे गाँव में तो जो कोई 'नमस्ते' करता है, तो लोग कहते हैं 'हम नहीं समझते, चले जाओ जंगल के रस्ते।' आज मैं भी सोचती हूँ कि असली बात क्या है?

चम्पो का व्याख्यान सुनकर सब हँस पड़े।

पं० सुधासिन्धु--हँसने की कोई बात नहीं। बहिन चम्पो ने जो कुछ सुना कह दिया। यह सभा तो इसीलिये बुलाई गई है। जब लोग समझ जायेंगे तो यह कहना छोड़ देंगे कि 'हम नहीं समझते।' जो बेसमझ है वह तो यही कहेगा कि 'हम नहीं समझते।'

मलूकदास—वाह पंडित जी! कैसा उत्तर दिया है।

पं० सुधासिन्धु जी—यह भी एक प्रश्न है कि 'जयराम जी' सनातन धर्म है या नमस्ते? राजा रघु जो राम के परदादा थे 'नमस्ते' कहते थे या 'जयराम जी' की? रामायण पढ़िये। महाभारत पढ़िये। वेद पढ़िये।

पं० सनातनानन्द जी—विचार मौलिक बातों पर होना चाहिये। ऊपरी बातें फिर होती रहेंगी। 'नमस्ते' और 'जयराम जी' तो शिष्टाचार की बातें हैं।

देवी मनोरमा जी—मूल बातें क्या हैं? आज उन्हीं पर बात होनी चाहिये।

पं० सनातनानन्द जी—मूल बात है ईश्वर उपासना। सब धर्मों में ईश्वर-पूजा को ही मुख्य माना गया है।

मौ० र० ब०—ठीक! बिलकुल ठीक। इबादत! एक अल्लाह की इबादत। यही दीन है। यही धर्म है। 'ला इलाह इल् लिल्लाह।' इसके सिवाय सब कुफ्र है। अल्लाह को छोड़ कर किसी दूसरे की पूजा नहीं करना चाहिये। हमारे मजहब में बुतपरस्ती हराम है। यह

Scanned by CamScanner

सबसे बढ़ कर पाप है।

पं० सनातनानन्द जी—मूर्ति पूजा तो सनातन से चली आई है। यही सनातन धर्म है।

पं० सुधासिन्धु जी—आज इसी बात का निर्णय होना चाहिये कि मूर्ति पूजा सनातन है या नहीं।

सेठ जगतपाल जी—कौन कहता है कि मूर्ति पूजा सनातन नहीं है। हमारा बहुत पुराना वंश है। आपने सेठ अमीचन्द का नाम सुना होगा। वह सेठ अमीचन्द लार्ड वार हेस्टिंग्ज के समय में हुये थे। हम उन्हीं के वंशज हैं। हमारे पुरखों ने कई मन्दिर बनवाये। हरिद्वार, काशी, प्रयाग सभी के पण्डे हमारे वंश को जानते हैं। पण्डों की बहियों में हमारे पुरखों के नाम मिलेंगे। मूर्ति पूजा सनातन न होती तो यह सब क्यों होता?

पं० सुधासिन्धुजी—क्या जो बात अमीचन्द से चली आई हो वह 'सनातन' है? अमीचन्द को तो दो सौ वर्ष ही हुये हैं। 'सनातन' का यह अर्थ नहीं।

पं० सनातनानन्द जी—अमीचन्द को जाने दीजिये। हम सतयुग और द्वापर की बात करते हैं। मूर्ति पूजा राम और कृष्ण के काल से भी पुरानी है।

पं० सुधासिन्धु—पुरानी भले ही हो। परन्तु सनातन तो नहीं। राम और कृष्ण से भी पहले दीर्घकाल व्यतीत हो चुका। श्री कृष्ण द्वापर के अन्त में हुये। राम त्रेता में। सतयुग में इनका भी नहीं था। यही नहीं आप भारतवर्ष के किसी मन्दिर को देख लीजिये। किसी न किसी देवी देवता या अवतार की मूर्तियाँ पाई जाती हैं। जब से वे पुरुष हुये उनके पहले की मूर्तियाँ हो ही नहीं सकती।

Scanned by CamScanner

भारत के बाहर की मूर्तियों को देखिये। कहीं यूनान के वीरों की मूर्तियाँ मिलेंगी। कहीं रोम के वीरों की। कहीं नार्वेजियन वीरों की। कहीं जंगली जातियों के योद्धाओं की। इनमें कुछ ऐतिहासिक हैं। कुछ कल्पित। कुछ मिश्रित। मूर्तिपूजा को सनातन धर्म नहीं कह सकते। मूर्तिपूजा आदि काल से नहीं चली आई है। आदि सृष्टि के किसी ऋषि, मुनि या राजा की मूर्तियाँ पूजी नहीं जाती। पण्डित सनातनानन्द जी या तो यह कहें कि 'हम सनातन धर्मी नहीं मूर्ति पूजक हैं।' असली सनातन धर्मी हम आर्य सामाजिक लोग हैं जो उसी एक निराकार, निर्विकार, एक रस, सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वर की उपासना करते हैं जो सब युगों में और सब देशों में एक सा रहता है। जिसके लिये न मूर्तियों की आवश्यकता है न मन्दिरों की।

दिल के आइने में है तस्वीरे यार।
जब जरा गर्दन झुकाई देख ली॥

मौ० र० ब०—हम भी मूर्ति नहीं पूजते।

पं० सुधासिन्धु जी—यह तो आप अच्छा करते हैं। परन्तु आप आधे सनातन धर्मी हैं। पूरे नहीं।

मौ० र० ब०—कैसे?

पं० सुधासिन्धु—जब आप कहते हैं कि 'लाइलाह इल् लिल्लाह' तो यह सनातन धर्म है। क्योंकि ईश्वर ही एक उपास्य है। सब युगों में ऐसा ही था और ऐसा ही रहेगा। परन्तु जब आप कहते हैं 'वल् मुहम्मद रसूलिल्लाह' तो यह नयापन आ जाता है। क्योंकि चौदह सौ वर्ष पूर्व मुहम्मद न थे।

मौ० र० ब०—हम मुहम्मद साहेब को रसूल मानते हैं। ईश्वर

Scanned by CamScanner

नहीं मानते। न मुहम्मद की पूजा करते हैं। न उनकी मूर्ति बनाते हैं।

पं० सुधासिन्धु जी—यदि पूजा नहीं करते तो उपासना के कल्मे में उनको क्यों शामिल करते हैं? अल्लाह को 'लाशरीक' भी कहते हैं और कोई उपासना बिना हजरत मुहम्मद साहेब के शरीक करने के पूरी नहीं होती।

मौ० र० ब०—आप स्वामी दयानन्द को हादी (पथ-प्रदर्शक) मानते हैं या नहीं?

पं० सुधासिन्धु जी—पथ-प्रदर्शक तो अनेक हो सकते हैं। ईश्वर एक ही है। हम ईश्वर उपासना में स्वामी दयानन्द का नाम नहीं लेते। हमारे गायत्री मन्त्र में एक अनादि, अनन्त ईश्वर का नाम है। हम 'दया नन्दाय नमः' नहीं कहते। स्वामी दयानन्द हमारे उपास्य देव नहीं। स्वामी दयानन्द ने स्वयं आर्य समाज के दूसरे नियम में स्पष्ट कर दिया है कि 'केवल उसी की उपासना करनी चाहिये वही सृष्टिकर्ता है।'

पं० सनातनानन्द जी—मुसलमान भी मूर्ति पूजक हैं।

मौ० र० ब०—झूठ! सरासर झूठ। हम बुतशकिन (मूर्ति-भंजक) हैं। बुतपरस्त (मूर्ति-पूजक) नहीं।

पं० सनातनानन्द जी—आप संग असवद (काले पत्थर) की मूर्ति की पूजा करते हैं।

मौ० र० ब०—हम पूजा नहीं करते, संग असवद का चुम्बन करते हें। क्योंकि हजरत मुहम्मद साहेब ने ऐसा ही किया था।

पं० सुधासिन्धु जी—जब संग असबद जड़ है चेतन नहीं, तो उसका चुम्बन क्यों करना? हमने तो कुरान शरीफ में पढ़ा है कि

Scanned by CamScanner

बुत न किसी की बात सुन सकते हैं, न कुछ बिगाड़ सकते हैं, न लाभ पहुँचा सकते हैं, तो संग असवद भी वैसा ही है। यदि मुहम्मद साहेब ने उसको चूमा तो वह भी किसी अंश में मूर्ति पूजक हो गये। आप यह भी नहीं कह सकते कि संग असवद का चुम्बन आदि सृष्टि से चला आया है। क्या बाबा आदम संग असवद की पूजा करते थे?

पं० सनातनानन्द जी—ईसाई भी मूर्ति पूजक हैं। वह ईसा, मरियम और सन्तों की मूर्तियाँ पूजते हैं और हिन्दुओं की भाँति आरती करते हैं।

पादरी डैविड पाल—ईसाई मूर्ति पूजक नहीं हैं। हजरत इब्राहीम मूर्ति पूजा का विरोध करते थे। जिन ईसाइयों ने आज्ञनवश मूर्ति पूजना आरम्भ किया उनका सुधार मार्टिन लूथर आदि लोगों ने किया है। उनका सिद्धान्त है कि बाइबिल में मूर्ति पूजा नहीं है।

पं० सुधासिन्धु जी—यदि पादरी साहेब मूर्ति पूजा के विरोधी हैं तो अच्छा है। परन्तु मूर्ति पूजा की जड़ तो है हजरत ईसा को ईश्वर का इकलौता बेटा मानना और यह विश्वास करना कि ईसा सब अगले और पिछले मनुष्यों के पापों को प्रायश्चित्त रूप में लेकर सूली पर चढ़ गया। अभी ईसा को हुये तो दो सहस्र वर्ष से भी कम हुये हैं। सृष्टि तो बहुत पुरानी है। अतः सनातन धर्म के लक्षण न तो ईसाई धर्म पर घटते हैं, न इस्लाम पर, न मूर्ति पूजक हिन्दुओं पर। इनके मन्तव्यों से ज्ञात होता है कि यह किसी धर्म पर विश्वास नहीं रखते जो ईश्वर की सत्ता की भाँति देश और काल के बन्धन से ऊपर हो और सनातन हो।

पं० सनातनानन्द जी—हम ईश्वर को तो सनातन ही मानते

Scanned by CamScanner

हैं और उसके नियमों को भी। परन्तु धर्म पर चलने वाला मनुष्य तो सनातन नहीं है। वह तो जन्मता और मरता है। इसलिये अपनी भावनाओं ओर परिस्थितियों के अनुसार वह ईश्वर के रूप की कल्पना करता है और अपनी भावना के अनुसार उसकी पूजा करता है तो इसमें क्या हानि?

पं० सुधासिन्धु जी—आँख सूर्य के अनुकूल चले या आपके अनुकूल। सूर्य की कल्पना करेगी? जीव ईश्वर को पूजता है या उसका निर्माण करता है? क्या जीव ईश्वर का भी खुदा है कि जैसा चाहो उसकी कल्पना कर लो?

पं० सनातनानन्द जी—क्या हम अपने माता-पिता के चित्र नहीं बना लेते?

पं० सुधासिन्धु—परन्तु माता-पिता सदा रहते नहीं। परमात्मा तो सदा आपके हृदय में रहता है। उपस्थित वस्तु का चित्र तो कोई नहीं बनाता। फिर आप ईश्वर का चित्र बना कैसे सकते हैं? क्या कभी किसी ने ईश्वर का फोटो लिया है? और क्या ईश्वर का वास्तविक स्वरूप ऐसा ही जैसा मूर्तिपूजकों के मन्दिरों में देखा जाता है? ईश्वर की आकृति क्या गणेश जी की सी है या बाराह की सी?

पं० सनातनानन्द जी—यह ईश्वर की आकृति तो नहीं है परन्तु उसके अवतारों की है। ईश्वर का अवतार तो पादरी साहेब भी मानते हैं।

मौलवी र० ब०—हजरत ईसा ईश्वर के अवतार नहीं थे, न ईश्वर के पुत्र थे। केवल नबी थे नबी?

पं० सनातनानन्द जी—परन्तु ईश्वर अवतार तो ले ही सकता

Scanned by CamScanner

है। जब दूसरों को शरीर दे सकता है तो स्वयं शरीर क्यों नहीं धारण कर सकता? क्या उसके पास शरीरों की कमी है? क्या उसमें शरीर निर्माण की शक्ति नहीं है?

पं० सुधासिन्धु जी—वाह पं० जी! शरीर तो उसी के लिये बनाया जाता है जिसके पास शरीर न हो और शरीर के बिना काम न चलता हो। ईश्वर के पास न तो किसी चीज की कमी है न आवश्यकता है। जो पूर्ण है उसको अपूर्ण बताना और उसके लिये शरीर की आवश्यकता बताना ईश्वर को कलंक लगाना और अनर्गल भावनाओं का कथन करना है। क्या आप तुलसीदास के वचन भी भूल गये—

बिनु पद चले, सुनै बिनु काना।
बिनु कर कर्म करै विधि नाना।

पं० सनातनानन्द जी—श्री तुलसीदास तो राम को ईश्वर का अवतार मानते हैं।

पं० सुधासिन्धु जी—तो क्या ऊपर की चौपाई राम के लिये कही गई हैं? क्या राम 'बिन पद' चलते और 'बिनु कान सुनते थे?' दो परस्पर विरोधी बातें तो माननीय नहीं हो सकती।

प्रोफसेर विज्ञान भिक्षु जी—परन्तु क्या ईश्वर के गुणों का काल्पनिक चित्र नहीं बना सकते? यदि कोई निर्भय और वीर पुरुष है तो क्या हम यह नहीं कह सकते कि वह शेर के समान है या शेर है? मनुष्य पहले गुणों की भावना बनाता है फिर उपमा उपमेय द्वारा इसका स्पष्ट करता है। समस्त संसार का साहित्य अलंकारों से भरा पड़ा है। आप जब अनन्त ईश्वर को अपने 'सान्त' मन से भावना करते हैं तो आप के मस्तिष्क में एक मूर्ति की

Scanned by CamScanner

कल्पना बन जाती है। दार्शनिक पुरुष जिस बात को सोचता है, कवि काव्यालंकारों के द्वारा शाब्दिक रूप देता है। चित्रकार उसका चित्र के रूप में चित्रण करता है। पथरकट या कुम्हार उसकी मूर्ति बना देता है। देवी-देवताओं की मूर्तियों का निर्माण इसी नियम पर आधारित है। जब लोगों ने 'काल' के वेग की कल्पना की तो उसके पंख लगा दिये। इसका यह तात्पर्य नहीं कि 'काल' कोई पंखों वाला पक्षी है।

सेठ जगतपाल जी—वाह श्री प्रोफेसर साहेब। आपने तो सनातन धर्म में जान डाल दी। ऐसी विद्वत्ता पूर्ण व्याख्या की है कि आनन्द आ गया।

मलूकदास वैरागी—धन्य हैं प्रोफेसर साहेब! धन्य हो! कैसी बारीक दलील निकाली है?

पं० सुधासिन्धु—पहली बात तो यह है कि यदि भिन्न-भिन्न लोग अपने पूजने के लिय नई-नई मूर्तियों की कल्पना कर लेंगे तो धर्म भी नित्य बदलता रहेगा। सनातन धर्म के लक्षण उस पर न घटेंगे। यही कारण है कि मूर्तिपूजक लोग कभी किसी देश में भी संगठित नहीं होते। मूर्तियों की कल्पनायें तो बनावटी होती हैं परन्तु मूर्तिपूजा के कारण जो सम्प्रदाय बन जाते हैं वे सदा कलह के कारण बने रहते हैं। भारतवर्ष में भी शैव, शाक्त, वैष्णव, जैनी आदि में लड़ाइयाँ होती रही हैं। यही हाल पैगम्बरों को मानने वालों का है। यही कबर पूजने वालों का है। भिन्नता चाहे वास्तविकता हो चाहे काल्पनिक, परन्तु है तो यह सचमुच लड़ाई की जड़। यह कदापि सनातन धर्म नहीं है।

महात्मा जी--पं० सुधासिन्धु जी! अभी उपमा, उपमेय की बात

Scanned by CamScanner

स्पष्ट नहीं हुई? प्रोफेसर साहब ने जो विचार प्रकट किये हैं उन पर आपकी सम्मति आवश्यक है।

मौ० र० ब०—वाकई। जनाब बजा फरमाते हैं। मैं भी सुनने का मुश्ताक हूँ लेकिन मजमून दकीक है। रात बहुत हो गई है। इसलिये अगली सभा में इस पर गौर होना चाहिये।

पं० सुधासिन्धु जी—महात्मा जी! मेरे लिये तो यह न नया विचार है। न युक्ति ही अकाट्य है। सूक्ष्म अवश्य हैं यदि आप सब की इच्छा है तो इसको अगली सभा के लिये रख दीजिये। परन्तु युक्ति के सूक्ष्म तन्तुओं को शायद लोग भूल जावें। परन्तु थके थकाये मस्तिष्कों के लिये भी समझ सकना कठिन है। अतः अगले सप्ताह पर छोड़िये।

महात्मा जी की आज्ञा से सभा विसर्जित हुई।

❖❖

Scanned by CamScanner

पाँचवीं सभा

ईश्वर की मूर्ति

सभा ठीक समय पर आरम्भ हुई। पहले पं० सुधासिन्धु जी ने नीचे के मन्त्र से प्रार्थना की और उसके अर्थ कहे—

इन्द्र मृल मह्यं जीवातुमिच्छ चोदय धियमपसो न धाराम्।

(ऋग्वेद ६-४७-१०)

हे परमात्मन्! आप हमको जीवन के उचित साधन दीजिये। और हमारी बुद्धि को इतनी तीक्ष्ण बनाइये जैसी तलवार की धार होती है। जिससे हम लोग सत्य को छिपाने वाली सूक्ष्म से सूक्ष्म युक्तियों को भी पकड़ सकें और किसी वाग्जाल में पड़कर धोखा न खा जाँय।

सभापति की आज्ञा पर आज यह निश्चित हुआ कि केवल सुधासिन्धु महोदय जी वक्तृता देंगे। पं० जी ने कहा—

आपको स्मरण होगा विगत सभा में श्री प्रोफेसर विज्ञान भिक्षु ने मूर्तिपूजा के पक्ष में एक सूक्ष्म युक्ति दी थी। युक्ति विद्वत्तापूर्ण है परंतु तर्क संगत नहीं है। चमकीली अवश्य है। परन्तु प्रत्येक चमकीली चीज निर्मल सोना नहीं होती। युक्ति सुन्दर है। परन्तु पीतल पर सोने का मुलम्मा है। इसलिये सावधानी से जाँचने की आवश्यकता है। पहले युक्ति के अवयवों पर क्रमशः विचार कीजिये।

प्रश्न यह है कि मूर्ति के द्वारा ईश्वर पूजा सनातन धर्म है

Scanned by CamScanner

या नहीं।

पं० सनातनानन्द जी—ठीक यही है! आपने अवतारों की मूर्तियों के विषय में तो यह कह दिया कि अवतार अपने जन्म से पूर्व न थे। परन्तु प्रोफेसर साहब का कहना यह है कि पहले हम ईश्वर के गुणों का मानसिक विश्लेषण करके गुण को गुणी से अलग देखते हैं। यह है सूक्ष्म भावना। इस भावना का स्थूलीकरण करने के लिये उसी गुण को किसी प्रत्यक्ष वस्तु से उपमिति करते हैं। फिर उस प्रत्यक्ष वस्तु की वाग् द्वारा या तूलिका द्वारा या वस्तु-कला द्वारा मूर्ति बनाते हैं। जब वह मूर्ति समक्ष आती है तो उस विशेष गुण की याद आ जाती है। और हम उस गुण का ईश्वर से सम्बन्ध जोड़ लेते हैं। हम मूर्ति पूजक नहीं है। मूर्तियाँ 'उपास्य' (माबूद) नहीं है। उपासना का साधन (इबादत का जरिया) है। उपास्य तो एक ईश्वर ही है। क्यों प्रो० साहब? यही तो आपने कहा था ?

प्रो० विज्ञान भिक्षु—ठीक यही मेरा तात्पर्य था। हमको 'बुतपरस्त' कहना झूठ है। हमारी मूर्तियाँ ईश्वर के गुणों की प्रतीक (अलामत या आयत या निशानियाँ) हैं। ईश्वर के गुण अनन्त हैं। अतः उनकी प्रतीकें भी अनन्त हैं।

जाकी रही भावना जैसी।
प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।

पं० सुधासिन्धु जी—हम आर्य लोग, मूर्तियों के विरोधी नहीं। मूर्तिपूजा के विरोधी हैं। बुत-शिकन या मूर्तिभंजक भी नहीं। मूर्तियों ने क्या बिगाड़ा है। आप लाख मूर्तियाँ बनाइये फोटो खींचिये। काल्पनिक चित्र बनाइये। कार्टून बनाइये! पत्थरों की मूर्तियाँ बनाइये। परन्तु मूर्तियों को ईश्वर-पूजा का साधन बनाना अनुचित भी है और

Scanned by CamScanner

निरर्थक भी। मूर्तियों को तोड़ने से मूर्ति पूजा नहीं जाती। एक को तोड़िये, दूसरी बन जायगी। बुराई की जड़ काटनी चाहिये।

अब युक्ति की सारता पर विचार कीजिये। एक दृष्टान्त लीजिये। राणा प्रताप बहादुर थे। बहादुरी उनका एक गुण था।

प्रो०—जी हाँ।

पं० सुधासिन्धु—इस गुण को आपके मन ने अलग किया (Abstracted)।

प्रो०—जी हाँ!

पं० सुधासिन्धु—यह गुण आपके मस्तिष्क में बिना किसी गुणी के स्थिन न रह सका। इसलिये आपने शेर का स्मरण करके कहा कि राणा प्रताप शेर के समान बहादुर थे।

पं० सु० सि०—फिर किसी कवि ने एक कविता बनाई जिसमें शेर के गुणों की उपमा देकर राणा जी की वीरता का वर्णन किया।

प्रो०—ठीक।

पं० सुधासिन्धु—फिर एक चित्रकार ने चित्तौड़ के जंगल का मानचित्र खींच कर उसमें एक सिंह का चित्र बना दिया। या किसी कलाकार ने चित्तौड़ के किले में एक शेर की मूर्ति बनाकर उस पर लिख दिया "चित्तौड़ का शेर, राणा प्रताप।"

प्रो०—जी। हाँ! इसमें दोष क्या है?

पं० सु० सि०—सोचिये! इस वाक्य में कि "राणा जी चित्तौड़ के शेर थे" और शेर की उस पत्थर की मूर्ति या शेर के चित्र में गुणों की स्मृति की दृष्टि से क्या अन्तर है। जब हम वाणी द्वारा शेर की उपमा को सुनते हैं तो गुणों पर अधिक ध्यान रहता है। और जब चित्र या मूर्ति को देखते हैं तो स्थूल काया में गुण

Scanned by CamScanner

तिरोहित हो जाता है। शेर की काया के अनेक अवयव हमारे मन पर आच्छादित हो जाते हैं और हम गुणों को भूल जाते हैं। इसलिये एक मूर्तिपूजक अपने मन में मूर्ति के स्थूल आकार और उसके अवयवों का अधिक ध्यान करता है। और ईश्वर के गुणों से शनैः शनैः दूर होता जाता है। इसलिये मूर्तिपूजा ईश्वर के गुणों का स्मरण करने में साधक नहीं बाधक है। लाखों और करोड़ों मूर्तिपूजक हैं उनसे पूछ लीजिये कि वह किसका ध्यान करते हैं, चित्तौड़ के किले में शेर की मूर्ति देखकर राणा प्रताप की वीरता का ध्यान करना सम्भव है। "राणा प्रताप चित्तौड़ के शेर थे" इस वाक्य में शाब्दिक अलंकार की भावना जागृत थी। जब वक्ता से चलकर यह उपमा चित्रकार या कलाकार के हाथ में आई तो उपमा का आत्मा लुप्त हो गया और ऊपरी शरीर मात्र रह गया जो वक्ता के अभिप्राय से सर्वथा विपरीत था। यदि किसी का पिता चींटी के समान परिश्रमी था तो वह यह पसन्द न करेगा कि उसके स्थान में 'चींटी' का चित्र बना दिया जाय। न चींटी को देखकर यह भावना पैदा होगी।

प्रो०—कुछ समझ में तो आता है।

पं० सुधासिन्धु—श्री प्रोफेसर साहेब, आप अपनी युक्ति के शब्दों पर न जाइये। युक्ति के प्रभाव पर जाइये! आप किसी साधारण जनता के समक्ष कहिए 'राणा प्रताप शेर थे'/इतना कहते ही हर आदमी समझ लेगा कि रूपकालंकार है। शेर का अर्थ है "शेर के समान 'निर्भय और वीर'। यदि उसी जनता के सामने आप एक चित्र या मूर्ति रखिये जिसमें चित्तौड़ के वन में शेर दिखाया गया है।' शेर को देखकर कोई रूपक की भावना को न समझ सकेगा। किसी स्त्री को चन्द्रमुखी कहने से ही उपमा और उपमेय का सम्बन्ध

Scanned by CamScanner

स्पष्ट हो जाता है। परन्तु उस स्त्री के स्थान में चाँद का चित्र या मूर्ति उसी भावना को उत्पन्न नहीं करती। इसीलिये जितने चित्र अथवा मूर्तियाँ कल्पना के द्वारा बनाई गई उन सब में ईश्वर की भावना लुप्त हो गई और अनेक प्रकार के भ्रम जाल फैल गये। इस कल्पना की तीन मुख्य सीढ़ियाँ हैं। पहली है दार्शनिक विद्वान की सीढ़ी कि वह अपने मस्तिष्क में ईश्वर के किसी गुण की कल्पना या भावना करता है। यह मानसिक व्यापार है। दूसरी सीढ़ी है उपमा उपमेय को व्यक्त करने वाला वाक्य। यह है वाणी का व्यापार। यह सीढ़ी तो दूसरी है परन्तु भाव के समझने और उसके व्यक्त करने में कुछ कठिनाई पड़ती है। परन्तु भाव बना रहता है। तीसरी सीढ़ी है चित्रकार या कलाकार की। इसमें सूक्ष्म भाव का इतना स्थूलीकरण हो जाता है कि तथ्य सर्वथा लुप्त हो जाता है। सम्भव है चित्रकार या कलाकार के मस्तिष्क में वह सूक्ष्म भाव विद्यमान रहा हो। परन्तु दृष्टा जब तक स्वयं भी उतना ही कलाकार न हो,उपमा की भावना को ग्रहण करने में असमर्थ है। मूर्तिपूजक कलाकार या दार्शनिक नहीं होते। इसीलिये संसार के मूर्तिपूजक ईश्वर के पूजक नहीं अपितु मूर्तियों के पूजक रहे हैं। सूक्ष्मीकरण की मानसिक भावना सदैव लुप्त रही है। इसीलिये प्रसिद्ध है कि मूर्तिपूजा अज्ञानियों के लिये है। परन्तु सच बात यह है कि मूर्तिपूजा अज्ञानियों को अज्ञानी बनाये रखने या अज्ञान को बढ़ाने के लिये है। पण्डे, पुजारी स्वयं ऐसे कृत्य करते हैं कि उपमा की भावना का तो लवलेश भी नहीं रहता। जब मूर्तियों को नहलाया जाता है, खाना खिलाया जाता है, सुलाया जाता है, जगाया जाता तो बताइये प्रोफेसर साहेब यह बस ईश्वर के किस गुण का विश्लेषण या मनश्चिन्तन है?

Scanned by CamScanner

महात्मा जी—बहुत सुन्दर! बहुत सुन्दर!! मैं नहीं जानता था कि श्री सुधासिन्धु ऐसे अच्छे तार्किक हैं। क्यों प्रोफेसर साहब आपका क्या विचार है ?'

प्रो० विज्ञान भिक्षु—महात्मा जी! आप ठीक कहते हैं। मैं समझ गया और अच्छी तरह समझ गया। कई बड़े-बड़े विद्वानों के मुख से मैंने इस युक्ति को सुना था कि जैसा मानसिक चित्र, वैसा ही भौतिक चित्र। परन्तु यह सर्वथा हेत्वाभास है। हेतु नहीं। अब मैं समझ गया कि मानसिक भावनाओं का चित्रीकरण करते-करते सत्यता लुप्त हो जाती है।

मौ० र० ब०—मैंने मूर्तिपूजा के विरुद्ध बहुत सी मोटी दलीलें सुनी थीं। लेकिन यह दलील तो लाजबाव है। वाह पण्डित जी वाह! हम समझते थे कि हिन्दू लोग तो मूर्तिपूजक ही होते हैं। ऐसी अजीब दलील आपने कहाँ से पाई?

पं० सुधासिन्धु जी—आश्चर्य तो यही है कि आपके कानों तक ठीक बातें नहीं पहुँचतीं। साधारण जनता में फैले हुये देवी, देवताओं के किस्से ही भ्रम फैलाया करते हैं। वेद में लिखा है—

विष्णोः कर्माणि पश्यत। *(ऋ०१-२२-१९)*

ईश्वर के कामों को देखो।

वहां यह नहीं कहा कि मनुष्य के किये कामों को ईश्वर के काम समझो। मनुष्य की बनाई मूर्तियों को ईश्वर की बनाई मत समझो। जीवों के खाये हुये को ईश्वर का खाया मत समझो। मूर्तियों के कपड़ों को ईश्वर के कपड़े मत समझो।

स्वा० सनातनानन्द जी—फिर ध्यान किसका लगावें?

पं० सुधासिन्धु—आप जिसका ध्यान लगाना चाहें उसी का लगा

Scanned by CamScanner

सकते हैं।

स्वा० सनातनानन्द जी—क्या हम मूर्ति का ध्यान लगा सकते हैं?

पं० सुधासिन्धु जी—ध्यान मूर्ति का भी लगा सकते हैं। काल्पनिक वस्तु का भी ध्यान लगा सकते हैं जैसे सिर कटा बैल। या चींटी के पंख पर उड़ता हुआ हाथी।

महन्त रामानन्द—आप मखौल करते हैं।

पं० सुधासिन्धु जी—नहीं महन्त जी! मखौल नहीं है। अपनी आँखें बन्द करके ध्यान लगाइये। जिस चीज का चित्र मन में बनाना चाहेंगे बन जायगा। हर चित्रकार जिस वस्तु का चित्र बनाना चाहता है उसी का पहले ध्यान करता है।

महन्त रामानन्द—फिर आप मूर्ति का खण्डन क्यों नहीं करते हैं।

पं० सुधासिन्धु—हमने मूर्ति का खण्डन कभी नहीं किया। हमने मूर्तिपूजा का खण्डन किया है। अर्थात् हमारा कहना है कि ईश्वर की उपासना मूर्तिपूजा या मूर्ति के ध्यान से नहीं हो सकती।

महन्त रामानन्द—फिर हम मूर्ति का ध्यान करते हैं तो क्या करते हैं?

पं० सुधासिन्धु—आप मूर्ति का ध्यान करते हैं। मूर्ति के सिवाय किसी का नहीं। क्या गधे का चित्र देखकर कबूतर का ध्यान हो सकता है?

महन्त रामानन्द—गधे का होगा। कबूतर का नहीं।

पं० सुधासिन्धु—किसी मनुष्य का चित्र देखकर उस मनुष्य का ध्यान होगा या ईश्वर का?

Scanned by CamScanner

महन्त रामानन्द—होगा तो मनुष्य का ही। परन्तु ईश्वर की तो कोई आकृति है ही नहीं।

पं० सुधासिन्धु—इसीलिये हम कहते हैं कि मूर्ति पूजा ईश्वरोपासना में साधक नहीं।

महन्त रामानन्द—क्या ईश्वर मूर्ति में नहीं है?

पं० सुधासिन्धु—आप का ध्यान तो मूर्ति में है। ईश्वर में नहीं। ईश्वर तो आपके हृदय में भी है। आपका ध्यान उधर नहीं जाता। बाहर भागा क्यों फिरता है ?

मलूकदास—अजी। मूर्तियाँ एक याद करने का बहाना हैं। संसार के कामों में लिप्त हुये लोग जब किसी मन्दिर के पास होकर गुजरते हैं! तो ईश्वर की याद करके हाथ जोड़ ही लेते हैं।

पं० सुधासिन्धु—मन्दिर को देखकर याद आती है तो अपने शरीर को देखकर क्यों नहीं आती? मन्दिरों का निर्माता तो एक कारीगर मनुष्य है। शरीर तो स्वयं ईश्वर का बनाया है। बनावे कोई और याद किसी की आवे ? कपड़े को देखकर कपड़े बनाने वाले की याद आयेगी या मिठाई बनाने वाले की? जो लोग सूर्य और चाँद को देखकर ईश्वर की याद नहीं करते और मन्दिर को देखकर करते हैं वह अपने को धोखा देते हैं। नगरों के भवन तथा मन्दिर मनुष्यकृत हैं। पहाड़, नदी, नक्षत्र ईश्वरकृत है। बड़े-बड़े मन्दिरों और उनकी मूर्तियों में जो कलाकौशल दिखाई देता है उससे मनुष्य की कला का बोध होता है। न कि ईश्वर का। जब उपासक धोखे में समझ लेता है कि उपासना का काम मूर्तियों को निहलाने, खिलाने या जल चढ़ाने मात्र से हो सकता है तो वह इतने में ही सन्तुष्ट हो जाता है और ईश्वर-पूजा की विधि जानने का यत्न नहीं करता।

Scanned by CamScanner

तीर्थों के मन्दिर धोखे की टट्टी है।

श्वेतकेतु जी—परन्तु मन्दिर, तीर्थ, मूर्तियाँ तो सदा से चली आई हैं।

पं० सुधासिन्धु—सनातन तो केवल ईश्वर है या उसकी सृष्टि। मूर्तियाँ चाहे कल्पित हों, चाहे अवतार या वीर पुरुषों की। सभी किसी न किसी मनुष्य के द्वारा कल्पित या निर्मित हैं। अतः सनातन नहीं।

एक बात और सोचिये। मनुष्य तो अनेक हैं। उनकी कल्पनायें भी भिन्न-भिन्न हैं। कल्पना करने वालों के ज्ञान स्तर भी भिन्न-भिन्न हैं। अतः यदि उपासना जैसी महत्वपूर्ण बात का आधार केवल लोगों की कल्पना पर छोड़ दिया जाय तो अनेक देशों की और अनेक युगों में ईश्वर के प्रति भावनायें भी भिन्न-भिन्न रहेंगी। फिर ईश्वर तो उपासकों के मन का खिलौना बन जायगा। किसी का चूहे पर सवार हाथी की सूँड़ वाला ईश्वर, किसी को बांसुरी बजाने और पीताम्बर पहने श्री कृष्ण, किसी का धनुष बाण लिये राम, किसी का फरसा लिये परशुराम, किसी का आधी शेर की आकृति वाला नृसिंह। इनके भिन्न-भिन्न रूप, भिन्न-भिन्न कथानक, भिन्न-भिन्न पराक्रम, भिन्न-भिन्न पूजा के ढंग। न ईश्वर का नाम रहा न ईश्वर के गुणों का। मन्दिर हैं देवी देवताओं के। ईश्वर का एक भी कहीं मन्दिर नहीं है। आपका हृदय ईश्वर का मन्दिर हो सकता था। परन्तु हृदय तो देवी-देवताओं की भावनाओं से भरा पड़ा है, उसमें किसी अन्य सूक्ष्म विचार के लिये आकाश या अवकाश ही नहीं। यह सनातन धर्म नहीं है। सनातन धर्म यही है कि ईश्वर जैसा है और जैसे उसके गुण-कर्म स्वभाव हैं उनका विचार करें। और उसी विचार

Scanned by CamScanner

को पक्का करें। यही ईश्वर पूजा है।

प्रो० विज्ञान भिक्षु जी—बहुत सुन्दर। बहुत सुन्दर।

मनोरमा जी—अब तो मैं भी समझ गई। आज से मूर्तिपूजा कभी न करूंगी।

चम्पो—हाँ, मैं भी समझ गई। मैं तो समझा करती थी कि नागपंचमी के दिन दीवार पर नागों (साँपों) का चित्रर बनाकर उनको खीर खिलाना ही ईश्वर-पूजा है। फिर क्या हम झूठ-मूठ के इसी गोरख धन्धे मे लगे रहते हैं ?

चुनुआ कहार—परन्तु पण्डितों और पुरोहितों की दान, दक्षिणा इसी बहाने से निकल जाती है। क्या इसमें पुण्य नहीं है ?

पं० सुधासिन्धु—पुण्य तो तभी तक है जब तक झूठ का प्रचार न हो। जहाँ धोखा या अज्ञान का प्रसार हो वहाँ तो पुण्य भी पाप हो जाता है। पुजारियों को दान देने वाले पुजारियों को लालची बना देते हैं। वे अनेक रूपों से जनता को ठगते हैं। और देवी देवताओं को अनेक रूपों की पोशाक पहनाते हैं। और प्रसिद्ध कर देते हैं कि देवी स्वयं ही रूप बदलती हैं। ऐसे खेल तो मन्दिरों में जाकर देख सकते हैं।

महात्मा जी—अब समय हो गया। पाँच दिन के पश्चात् फिर सभा लगेगी। अब मूर्तिपूजा का विषय बन्द। हमारी सभा के लिये कोई और विषय सोचकर आइये। श्री पं० सनातनानन्द जी सनातन धर्म की कोई और बात चुनकर आइये।

❖❖

Scanned by CamScanner

छठी सभा

कब्रों की पूजा

आज सभा की छठी बैठक थी। जब सब लोग यथा स्थान बैठ गये तो चुनुआ कहार ने पूछा—

"महाराज! आप सब बड़े-बड़े लोग बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। हम मूर्ख मनई समझ नहीं सकते। यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ पूछूँ।"

महात्मा जी—अवश्य! यह सभा तो है ही इसलिये कि सबको कुछ न कुछ प्राप्त हो जाय।

चुनुआ—महाराज! आजकल तो हमारे गाँव के लोग, सय्यद सालार की जात (यात्रा या मेले) में लगे हुये हैं? बड़े-बड़े झण्डे निकाले जा रहे हैं। देहाती नर, नारी, बुड्ढे, बालक सभी बड़े उत्साह से मेला लगा रहे हैं। क्या यह सनातन धर्म नहीं है? यह मेला बहुत दिनों से हर साल लगता है।

सेठ जगतपाल जी—हम देखते तो बहुत दिनों से हैं। परन्तु यह सनातन धर्म नहीं है। सय्यद सालार तो एक मुसल्मान थे।

मलूक दास—मुसल्मान थे तो क्या हुआ? उनकी कब्र है। उस पर बड़ा भारी मेला लगता है। हजारों की भीड़ होती है। सनातन धर्म न होता तो हिन्दुओं की इतनी भीड़ क्यों लगती—

चम्पो—हमारा भाई बीमार हो गया था। जब सय्यद सालार

Scanned by CamScanner

की मानता मानी गई तो अच्छा हो गया। पारसाल हम लोगों ने भी सय्यद सालार की कब्र पर चादर चढ़ाई थी। मैं भी गई थी। लाखों की भीड़ थी।

महात्मा जी—यह सय्यद सालार कौन थे ?

प्रो० विज्ञान भिक्षु—शायद यह एक मुसल्मान सरदार थे जिन्होंने हिन्दुओं पर चढ़ाई की थी और वे लड़ाई में मारे गये।

महात्मा जी—फिर क्या हुआ ?

प्रो० वि० भि०—हुआ क्या? कबर बन गई। कुछ मुजावर कब्र पर बैठने लगे। मेला लगने लगा।

पं० सुधासिन्धु जी—श्री सनातनानन्द जी बतावें कि क्या यह सनातन धर्म है और चादर चढ़ाने वाले हिन्दू सनातन धर्मी हैं ?

स्व० सनातनानन्द जी—यह सनातन धर्म तो नहीं है। परन्तु पूजक लोग हिन्दू हैं और सनातनधर्मी भी कहलाते हैं।

पं० सुधासिन्धु—क्या जो शत्रु हिन्दुओं पर आक्रमण करते हुये मारा जाय उसका या उसकी स्मृति का हिन्दुओं को सम्मान करना चाहिये ? शहाबुद्दीन गोरी ने जयचन्द और पृथ्वीराज की हत्या की। क्या उनकी सन्तान शहाबुद्दीन की कब्र को पूजना पसन्द करेगी ?

अश्वकेतु जी—कदापि नहीं। हम राम के वंशज हैं। राम के शत्रु रावण के उपासक नहीं। इसी प्रकार सैकड़ों मुसलमान विजेताओं या आक्रमणकारियों की भारतवर्ष में कबरें मिलेंगी। यह वे लोग थे जिन्होंने मन्दिरों को गिराया, मूर्तियों को तोड़ा। इनकी पूजा करना मूर्खता है।

पं० सुधासिन्धु जी—जब सय्यद सालार मारे गये तो उनकी कबर में उनका आत्मा है। या लाश ?

Scanned by CamScanner

चुनुआ—लाश होगी। कहीं कोई जीवित को गाड़ता है ?

पं० सुधासिन्धु जी—क्या लाश अब भी विद्यमान है ?

चुनुआ—वाह पंडित जी ! आप मखौल करते हैं। लाश तो कभी की सड़कर मिट्टी हो गई। आज की बात थोड़ी ही है। मुद्दतें हो गईं।

पं० सुधासिन्धु—फिर आप चादर किस पर चढ़ाते हैं ? और मिन्नत किसकी मानते हैं? मौलवी रहीम बख्श जी बतावें कि क्या इस्लाम में कबर पूजना विहित है ?

मौ० र० ब०—तोबा। तोबा। हरगिज नहीं।

पं० सुधासिन्धु—फिर यह मुजाविर ऐसी धर्म के विरुद्ध बात क्यों करते हैं। बहरायच, अमरोहा, अजमेर, देवाशरीश बीसियों स्थानों पर कबरें पूजी जाती हैं। कव्वालियाँ पढ़ी जाती हैं ?

मौ० र० ब०—हम कबरों को तो नहीं पूजते परन्तु धर्म की राह में जिन्होंने लड़कर जान दी और शहीद हो गये उनकी स्मृति का हम सम्मान करते हैं ?

महन्त रामानन्द—परन्तु उन्होंने हिन्दू धर्म के तो विरोध में ही जान दी। फिर हम क्यों उनका सम्मान करें ?

पं० सुधासिन्धु जी—आप सोचिये और अपने को सनातन धर्म कहलाने वाले या सनातन धर्म के धर्माध्यक्ष सोचें। जो साँपों को नहीं अपितु साँपों की मूर्तियों और चित्रों की पूजा करने का अभिमान रखते हों उनके लिये मित्र और शत्रु में कोई भेद नहीं। रही मुसल्मानों की बात। जब तक इनके मत में मृतकों के शरीरों को गाड़ने की प्रथा बनी है, कबरें रहेंगी और उनकी पूजा भी रहेगी। खुदा की इबादत और कबरों की पूजा में कोई बड़ा अन्तर नहीं है। मुसल्मानों

Scanned by CamScanner

को कबरों का श्राद्ध और तर्पण करते हैं इसी प्रकार मुसल्मान भी समझते हैं कि कबरों पर फातिहा पढ़ने से मरे हुये लोगों की आत्माओं (रूहों) का कल्याण होगा। यह सब अविद्या की बातें हैं। और लोगों को लूटने के लिये हैं। हिन्दू नर-नारियों को पूजा की आदत है। यह ईंट, पत्थर, वृक्ष, पहाड़, तारा, पशु, पक्षी सभी को पूजने लग जाते हैं और कबरों को भी पूजते हैं। नगर के चौराहों पर चौक पूरना और चढ़ावा तथा जल चढ़ाना तो हिन्दू स्त्रियों का दैनिक कार्य है। यही धर्म है। यही देव पूजा है, यही पुण्य है। क्या कहा जाय इस भेड़ चाल को ? मुसलमानों ने भी हिन्दुओं की इस अविद्या का लाभ उठाया। चढ़ावा हिंन्दू चढ़ावें और खावें मुसल्मान फकीर या पीर। और बदले में उन्हीं को जिनकी कृपा से हलवा, मांस मिलता है, जाहिल, काफिर, बुतपरस्त और अधर्मी समझे। कोई मुसल्मान पीर हिन्दू यात्रियों को नहीं समझाता कि कबर पूजना पाप है। मुसल्मान समझते हैं कि कबर परस्ती का पाप तो हिन्दुओं को लगेगा, वह तो पूजा के चढ़ावे को खाने वाले हैं। कहिये मौलवी साहब क्या पाप की कमाई खाना पाप नहीं है ?

मौलवी र० ब०—बात तो ठीक है। कबर को पूजना भी कुफ्र है और उसकी कमाई खाना भी पाप है। परन्तु मरने पर अपने रिश्तेदारों की लाशों पर कबरें तो बनाना ही होगा। हिन्दुओं के मुरदे जलाने की रसम बड़ी भयानक है। जिन इष्ट मित्रों के साथ जीवन भर स्नेह रहा उनको आग में जला दें। तोबा ! तोबा ! इस कदर बेरहमी।

पं० सनातनानन्द जी—वाह जी मौलवी साहब ! यह तो आपने अनोखी बात कही। यदि मुरदा जलाने में बेरहमी है तो मुरदे को

Scanned by CamScanner

सैकड़ों मन मिट्टी के नीचे दबाने में बेरहमी नहीं। कबरों में लाशें सड़ जाती हैं। कीड़े पड़ते हैं। दुर्गन्ध फैलता है। बेरहमी तो जीवित गाड़ने में होती। रूह निकल गई। बेजान लाश है। है न मौलवी साहब ?

मौलवी र० ब०—है तो। परन्तु हमारा विश्वास है कि कयामत के दिन मुरदे जी उठेंगे। और खुदा उनके कर्मों का बदला देगा।

पं० सनातनानन्द जी—करोड़ों हिन्दुओं, बौद्धों आदि के मुर्दे जलते रहे हैं। उनकी रूहें कहाँ रहेंगी और कयामत के दिन उनके कर्मों का कैसे बदला मिलेगा ? या जो जल में डूबकर मर गये और जिनके शरीरों को मगरमच्छ खा गये उनको कयामत के दिन कैसे उठाया जायेगा ?

पं० सुधासिन्धु जी—एक और बात सोचिये! कल्पना कीजिये कि एक नूरा मुसल्मान फरात या दजला नदी में डूब कर मर गया? यह कोरी कल्पना तो नहीं है। ऐसा सम्भव है न ?

मौ० र० ब०—हाँ! हो सकता है। ऐसी मौतें तो हुआ ही करती हैं।

पं० सुधासिन्धु—और उसको मछलियाँ खा गईं।

मौ० र० ब०—फिर ?

पं० सुधासिन्धु--मछली के इस शरीर को ईदू मुसल्मान ने खाया।

मौ० र० ब०—फिर क्या ? वह तो साधारण सी बात है। इससे कबरपरस्ती से क्या सम्बन्ध ?

पं० सुधासिन्धु—शान्ति रखिये ! नूरा के शरीर के अंग मछली के शरीर में बदल गये। और मछली के शरीर के अंग ईदू के शरीर

Scanned by CamScanner

में बदल गये। जब ईदू मरेगा और उसकी कबर बनाई जायगी तो कयामत के दिन नूरा की रूह उठाई जायगी या ईदू की।

मौ० र० ब०—वल्लाह आलम ! (ईश्वर ही जानता है।) ऐसी दलीलें धर्म में नही चलतीं। मनुष्य अल्पज्ञ है।

पं० सुधासिन्धु जी—अल्पज्ञ है तो सर्वज्ञ क्यों बनता है और दूसरे अल्पज्ञों की बात बिना सोचे क्यों मान लेता है? कयामत के दिन मुरदों के उठने की बात भी तो अल्पज्ञ लोगों की मनगढ़न्त है।

मौ० र० ब०—मनगढ़न्त नहीं। खुदा पाक की किताब में लिख है। खुदा ने ऐसा बताया है।

पं० सुधासिन्धु—खुदा ने हमको तो नहीं बताया। यदि यह खुदा की बात होती तो दलील से भी सिद्ध हो सकती। देखिये मौलवी साहेब। यह तो मानना ही पड़ेगा कि कबर में रूह नहीं रहती। लाश रहती है। कबर में दफन करना उतनी ही बेरहमी है जितनी जलाना। मुर्दा जलाने से सड़ने की सम्भावना नहीं रहती। भूमि भी बेकार नहीं जाती। गंगा के किनारे चार हाथ भूमि में करोड़ों मुरदे जल जाते हैं। मुसल्मान या ईसाइयों के मुरदों का हिसाब लगाइये। कोई बड़ा नगर लीजिये जिसमें दो लाख आदमी रहते हैं ! मगर दो लाख में दस आदमी भी प्रतिदिन मरें तो साल भर में लगभग ३००० मरे। एक कबर में १० वर्ग गज जमीन लगी तो ३०००० वर्ग गज जमीन हुई। बीस वर्ष में ६००००० (छः लाख वर्ग गज) जमीन लग गई। इतनी जमीन तो मिल ही नहीं सकती। यदि छः लाख वर्ग गज जमीन मुर्दों को दे दी जाय तो जिन्दा कहाँ रहेंगे ?

मौ० र० ब०—हमारे पंडित सुधासिन्धु जी को तो बाल की

Scanned by CamScanner

खाल निकालना आता है। कुछ आर्य समाजियों की आदत हो गई है कि जमीन आसमान के कुलाबे मिला देते हैं। सैकड़ों नगर मुसल्मान हैं। जहाँ मुर्दे गाड़े जाते हैं। कोई कठिनाई नहीं होती। कबरस्तान बने हुये हैं। उन्हीं से काम चल जाता है।

पं० सुधासिन्धु जी—मैं आपकी बात को बुरा नहीं मानता। परन्तु दलील में क्या कमजोरी है यह देखिये। यह माना कि कबरस्तान है परन्तु पुरानी कबरें मिट जाती हैं। और उन्हीं के स्थान पर नये मुर्दे गाड़ दिये जाते हैं। हैं न !

मौ० र० ब०—इससे क्या ?

पं० सुधासिन्धु जी—क्या आप यह नहीं सोचते कि एक ही स्थान में सृष्टि की आदि से आज तक सैकड़ों लाशें दफनाई जाती रहीं। एक की हड्डियाँ दूसरे में मिल गईं। कयामत तो बहुत दूर है ?

मौ० र० ब०—हम इस सबका हिसाब नहीं लगाते। हिसाब अल्लाह जाने।

चुनुआ—अजी, महाराज ! कबर की मिन्नत न मानें तो हमारा बीमार कैसे अच्छा हो? हम नहीं जानते कि रूह कहाँ गई ? कहाँ से आई ? परन्तु भूत-प्रेत तो आता है।

चम्पो—जरूर आता है। हमने सिर हिलाते देखा है।

पं० सुधासिन्धु—सिर कौन हिलाता है ?

चम्पो—यही जिनके सिर भूत आता है।

पं० सुधासिन्धु—भूत तो नहीं दिखाई देता। अरे भाई ! यह बस मनगढ़न्त बातें हैं। जब पहले से भूत का डर बिठा दिया जाता है तो सिर का दर्द भी भूत प्रतीत होता है। जो लोग भूत-प्रेत की

Scanned by CamScanner

परवाह नहीं करते और भूत-प्रेत के एजेन्टों की बात नहीं सुनते उनके रोगी तो डाक्टरों की दवा से ही अच्छे हो जाते हैं। भूत-प्रेत के चक्कर में सैकड़ों रोगी बिना ठीक इलाज के मर जाते हैं। देखिये, गीता में लिखा है कि जैसे हम पुराना कपड़ा उतार कर नया पहन लेते हैं वैसे ही आत्मा मर कर दूसरा नया शरीर धारण कर लेता है ? कहिये स्वा० सनातनानन्द जी ! यही तो सनातन धर्म है न?

स्वा० सनातनानन्द जी—है तो यही। परन्तु भूत-प्रेत भी तो योनियाँ हैं ?

पं० सुधासिन्धु—यदि ये योनियाँ होतीं तो उन योनियों के गुण तथा नाम होते, उनके शरीर दिखाई देते। उनके नियत कार्यक्षेत्र होते। जरायुज, अण्डज और स्वेदज योनियों में से एक होते। भूत और प्रेत जन्मते और मरते, उनके भी रोग आदि होते। संस्कृत भाषा में भूत का अर्थ है 'गुजरा हुआ', 'प्रेत' का अर्थ है 'गया हुआ'। जिन योनियों में शारीरिक जनम-मरण होता है जैसे पशु, पक्षी, मछली आदि इसमें किसी का नाम भूत या प्रेत नहीं है। वैदिक संस्कृति सनातनी है। इसके शब्दों के अर्थ भी सनातनी हैं। उनके निज अर्थ हैं। इसलिये इनके अन्यथा अर्थ करना अथवा नवीन कल्पनायें बनाना सनातन धर्म है ही नहीं। मुसल्मानों की तो पद्धतियों भी नवीन हैं। भावनायें भी नवीन हैं। सनातन धर्म मानने वालों को विचारपूर्वक कार्य करना चाहिये। हमारे उच्च श्रेणी के पण्डित वर्ग का परम कर्तव्य है कि जनसाधारण में मिथ्या भावों और मिथ्या आचरणों का खण्डन करते रहें, जिससे सनातन धर्म के शुद्ध जल में अनाप-शनाप कीचड़ न मिल जाय। दो चार पीढ़ियों से जो प्रथा चल पड़ती है उसी को आप लोग सनातन धर्म कहने लगते हैं।

Scanned by CamScanner

यह बड़ा दोष है। नये मन्दिर, नई देवी, नये देवते, नये पीर, नये गुरु, नये मन्दिर, नये महन्त ! सनातन धर्म क्या है चूँ-चूँ का मुरब्बा हो गया है।

महन्त रामानन्द—बात तो ठीक है। सोचने की बात है।

महात्मा जी—आज की सभा विसर्जित।

मलूकदास—अबकी सभा कब लगेगी ? परसों छुट्टी है। परसों सहीं।

महात्मा जी—अच्छा ! परसों ! नमस्ते !

सबने महात्मा जी को प्रणाम किया और घरों को चल दिये।

Scanned by CamScanner

सातवीं सभा

श्राद्ध और तर्पण

पूर्व की भाँति जब सभा बैठ गई तो मौलवी रहीम बख्श ने कहना प्रारम्भ किया—

जनाब सदर ! पिछले दिन कबरों का तजकरा हुआ था। और फातिहा का भी जिकर हुआ था। परन्तु हिन्दू लोग भी तो मुरदों का श्राद्ध करते हैं। हम बहुत कुछ तो जानते नहीं परन्तु एक महीना आता है जब पन्द्रह दिन तक 'सराध' किया जाता है। बिरहमनों की मौज रहती है। एक-एक बिरहन तीन-तीन दावतें खाता है। उस महीने को क्या कहते हैं ?

सेठ जगतपाल—जी हाँ ! उस महीने का नाम है 'कुवार' या असौज। उसके पहले पक्ष को पितृपक्ष कहते हैं। इसमें मृत पितरों को पानी देते हैं और श्राद्ध करते हैं।

पादरी डैविड पाल--(कुछ मुस्कराकर)--मृतकों को पानी कैसे देते हैं ?

पं० सनातनानन्द जी—पादरी साहेब, यह परोक्ष बातें हैं। आप क्या जाने ?

प्रोफेसर विज्ञान भिक्षु—पं० जी ! समझना तो चाहिये। धर्म के अन्तर्गत परोक्ष और प्रत्यक्ष दोनों आते हैं। तर्पण और श्राद्ध तो प्रत्यक्ष क्रियायें हैं। हमने तर्पण होते भी देखा है और श्राद्ध

Scanned by CamScanner

तथा पिण्डदान भी।

पं० सनातनानन्द जी—क्रियायें तो प्रत्यक्ष हैं। परन्तु इसका फल परोक्ष है। जब मन्त्र पढ़कर जलांजलि दी जाती है तो 'मृत' पितर दिखाई न देते हुये भी जल और भोजन को ग्रहण कर लेता है।

प्रो० वि० भि०—अदृष्ट आत्मा दृष्ट जल या अन्न को कैसे लेते हैं ? हम तो देखते हैं कि जल भूमि पर गिर पड़ता है। भोजन मनुष्य अर्थात् पं० जी खा जाते हैं।

सेठ जगतपाल—श्राद्ध तो हमारे घरों में भी सनातन से चला आता है। परन्तु हमारे लड़के तो हँसा करते हैं कि नाम किसी का हो और खाये कोई ? मेरा भतीजा तो कहता है कि जब मरकर आत्मा दूसरा जन्म ले लेता है तो 'मृत-पितर' ऐसी कोई सत्ता रहती ही नहीं। जीवित मनुष्य आदि हो जाते हैं। हम उनको 'मृत' इसलिये कहते हैं कि वह अब हमारे सम्बन्धी नहीं रहे। परन्तु हैं तो जीवित। 'पुनर्जीवित' सही। परन्तु वह न अदृष्ट है, न शरीर रहित, न मृतक। जब 'मृतक' है नहीं तो श्राद्ध कैसा और तर्पण कैसा ?

चम्पो—वह 'आर्या' हो गया होगा। तभी तो ऐसी बातें करता है। श्राद्ध और तर्पण तो पुरानी चाल है।

श्री अश्वकेतु जी—एक बात बताइये। जब मनुष्य मर गया और उसका दूसरा जन्म हो गया तो वह उस योनि में खाता-पीता है। उसको हमारे श्राद्ध या तर्पण की क्या आवश्यकता है ? हम तो जानते नहीं कि वह कहाँ है ? किस देश में है? किस लोक में है? हमको उसका पता नहीं। हमारा उसको पता नहीं। हम तो यह भी नहीं मानते कि कबरों में रूहें हैं और वह कयामत के दिन

Scanned by CamScanner

उठेंगी। फिर यदि हम चाहें तो भी उनको कुछ नहीं पहुँचा सकते।

श्री पं० सनातनानन्द जी—सनातन धर्म के कर्तव्यों में पितृ-यज्ञ एक विशेष कर्तव्य है।

पं० सुधासिन्धु—'पितृ-यज्ञ' जीवित पितरों का या मरों का।

चुनुआ कहार—'पितर' तो मरे हुओं को ही कहते हैं। जीवित को तो पिता कहते हैं। 'पितर' और 'पिता' एक तो नहीं ?

पं० सुधासिन्धु जी—क्यों पं० सनातनानन्द जी ! क्या 'चुनुआ' का कहना ठीक है ? आप तो संस्कृत पढ़े हैं।

मौलबी र० ब०—हमने भी ऐसा ही सुना है। संस्कृत तो हमको आती नहीं।

पं० सनातनानन्द—नहीं, नहीं ! चुनुआ की यह बात ठीक नहीं। 'पिता' एक वचन है 'पितर' बहुवचन है। एक पिता को 'पिता' कहेंगे। माता और पिता दोनों को 'पितरौ' कहेंगे। बाबा, दादी, पिता, माता आदि कई 'पितर' कहलायेंगे।

मौलबी र० ब०—क्या जैसे वालिद, और 'वालिदैन' होते हैं।

प्रो० विज्ञान भिक्षु—ठीक यही बात है।

मलूकदास—तो क्या जीते माता, पिता दादी, बाबा आदि 'पितर' हैं।

पं० सनातनानन्द जी—हाँ ! हैं। परन्तु मरे पितरों को भी पितर कहते हैं।

पं० सुधासिन्धु—कहलायेंगे तो 'पितर' ही। परन्तु यह 'इतिहास' की बात हो गई। अब वह रहे नहीं। इसलिये वह 'रिश्ता' भी टूट गया। किसी बालक का पिता मर जाय तो वह अनाथ कहलायेगा। क्योंकि पिता-पुत्र का सम्बन्ध टूट गया। नई योनि में नये रिश्तेदार

Scanned by CamScanner

बन गये। पुराने छूट गये। पुरानों का न पता, न सम्बन्ध। न उनसे आशा रखनी। क्या पण्डित सनातनानन्द जी बता सकते हैं कि उन्होंने अपने पिछले जन्म के किसी सम्बन्धी से कुछ माँगा या पाया हो?

पं० सनातनानन्द जी—सूक्ष्म फल मिलता है। कौन जानता है कि जो कुछ हमको इस जन्म में मिल रहा है वह श्राद्ध और तर्पण का फल हो ?

पं० सुधासिन्धु—आपके कर्मों का नहीं ? यह तो कर्म-फल सिद्धान्त की अवहेलना है। यदि पुत्रों और पुत्रियों के श्राद्ध करने से मोक्ष मिल जाय तो राजे-महाराजे तो अवश्य ही मोक्ष को पा सकें। वस्तुतः जैसे कबरों के मुजाविर हैं इसी प्रकार श्राद्ध और तर्पण में खाने वालों का ढोंग है।

पं० सनातनानन्द जी—श्राद्ध और तर्पण तो शास्त्र में लिखा है।

पं० सुधासिन्धु—लिखा तो उन्हीं के लिये है जो जीवित हैं। क्या शास्त्र ऐसी आज्ञायें भी देता है जो सम्भव नहीं ? आप अपने पुत्र को आज्ञा दीजिये कि हमारे परदादा को खाना भेज दो। वह पूछेगा, 'वह कहाँ हैं ? क्या खाना भेजूँ ? कैसे भेजूँ?' आप कहेंगे, 'मैं नहीं जानता। भेज दो। पण्डित जी को दे आओ।' आपका लड़का पूछेगा, 'यदि पण्डित जी को दे आऊँ तो क्या उनको पता है ? क्या वह बीच में हड़प तो नहीं जायेंगे ? रसीद मिलेगी या नहीं?' आप क्या कहेंगे? अजी पितृ यज्ञ तो जीवित माता-पिता का ही होता है। शास्त्र में यही लिखा है।

चम्पो—हमने तो आज तक जीवित माता-पिता का श्राद्ध होते नहीं देखा!

पं० सुधासिन्धु—अच्छे लड़के सदा पितृ-यज्ञ करते हैं। आदर के

Scanned by CamScanner

साथ माता-पिता की सेवा करना, उनको भोजन देना ही श्राद्ध है।

पं० सनातनानन्द जी—श्राद्ध और तर्पण। दो हैं न ? तर्पण में तो 'जलांजलि' ही दी जाती है !

महात्मा जी—पं० सुधासिन्धु जी ! इसको स्पष्ट करें।

पं० सुधासिन्धु—पितृ-यज्ञ तो एक ही क्रिया है। अर्थात् जीवित माता-पिता आदि का सत्कार और आदर के साथ पालन करना। परन्तु इस एक ही क्रिया के लिये दो भिन्न-भिन्न दृष्टियों से दो नाम हैं एक श्राद्ध और दूसरा तर्पण ! यदि आप किसी मित्र को दस रुपये भेजें तो आप 'भेजने वाले' हुये और वह 'पाने वाला'। आपके लिये वह 'प्रदान' है। आप आपके मित्र के लिये 'आदान'। एक कर्ता है। दूसरा 'सम्प्रदान'। इसलिये जब एक पुत्र श्रद्धा से अपना कर्तव्य समझ कर अपने माता-पिता को भोजन देता है तो वह उसके लिये 'श्राद्ध' (श्रद्धा से किया हुआ कर्म) है। माता-पिता की इससे 'तृप्ति' होती है। इसलिये उनके लिये यह तर्पण हुआ। श्राद्ध में केवल अन्न ही नहीं अपितु जल भी शामिल है। तर्पण में भी अन्न और जल आदि शामिल हैं। यथार्थ पितृ-यज्ञ को भूलकर लोगों ने अविद्यावश मृतक श्राद्ध आदि की प्रथा डाल दी। पितृ पक्ष की बात भी कपोल कल्पित है। वर्ष में चौबीस पक्ष होते हैं। एक पक्ष में एक दिन खिलाना और शेष दिनों में भूल जाना। यह पितृ-यज्ञ तो नहीं हुआ।

पं० सनातनानन्द जी—हमने तो ऐसी बात कभी नहीं सुनी।

पं० सुधासिन्धु—सुनने-सुनाने की बात नहीं। यह तो शास्त्र की बात है। शब्द अपना अर्थ आप बताता है। 'श्राद्ध' शब्द 'श्रत्' और 'धा' से बना है या नहीं ? तर्पण 'तृप्' धातु से बना है या नहीं?

Scanned by CamScanner

स्वार्थवश शब्दों का अर्थ का अनर्थ करना तो ठीक नहीं।

श्री अश्वकेतु जी—आज बहुत सी नई बातें ज्ञात हुईं। हम तो धोखे में ही थे। हम समझते थे कि आर्य समाजी नालायक औलाद हैं। अपने माता-पिता का श्राद्ध तक नहीं करते।

पं० सुधासिन्धु जी—श्रीमान् जी ! आप कहने को कुछ कहिये। परन्तु एक दिन दो चुल्लू पानी देने से पुत्र सुपुत्र कैसे बन जाता है?

जियत पिता से दंगम दंगा।
मरे पिता पहुँचाये गंगा।

मंगलदास—परन्तु मुझे तो मृतक श्राद्ध प्रथा में भी दो लाभ प्रतीत होते हैं। एक तो पूर्वजों का स्मरण, दूसरे श्राद्ध के बहाने से दान पुण्य।

सेठ जगतपाल—इतना तो मानना ही पड़ेगा।

पं० सुधासिन्धु—जो प्रथा मिथ्या भावनाओं को उत्पन्न करे वह अविद्याजन्य होने से भ्रम, असत् तथा पाप है। पुण्य कर्म तो सत्यमूलक ही हो सकता है। यदि श्राद्ध करने वाले इस तथ्य को समझ लें तो कभी श्राद्ध न करें। यह मिथ्या भावना ही श्राद्ध कराती है कि हमारे मृतक पूर्वजों को श्राद्ध या तर्पण किसी न किसी परोक्ष रूप में पहुँचेगा। इस भावना को पुष्ट करने के लिये मिथ्या कथानक बनाये जाते हैं। यह प्रसिद्ध है कि गया नगर की फलगू नदी में जब तर्पण किया जाता है तो पितर हाथ फैलाकर उसको स्वीकार करते हैं। इस मिथ्यावाद का पाप श्राद्ध करने वालों और श्राद्ध कराने वालों दोनों को लगता है। पूर्वजों के गुणों या पराक्रमों का स्मरण तो कोई नहीं करता। दान देने के तो बहुत से उचित प्रकार हैं।

मनोरमा—क्या यह प्रथा सनातन नहीं है ?

Scanned by CamScanner

पं० सुधासिन्धु—कदापि नहीं। पुनर्जन्म के मानने वाले वैदिक ऋषि मुनि ऐसी ऊटपटाँग प्रथा नहीं चला सकते। मध्यकालीन स्वार्थी पण्डितों ने और उन पर अन्ध विश्वास करने वाले कवियों ने अपने ग्रन्थों में इनका कहीं-कहीं उल्लेख कर दिया है। परन्तु यह सनातन धर्म नहीं। इस प्रथा से एक बड़ी हानि यह हुई है कि वास्तविक पितृ-यज्ञ लुप्त हो गया। हिन्दुओं ने अपनी पुरानी महत्वपूर्ण पद्धतियों को बिगाड़-बिगाड़ कर खिलौना बना रखा है। 'मातृनवमी' एक त्यौहार है। उस दिन जीवित माता को कोई नहीं पूछता। 'गुरुपूजा' का एक पर्व है। गुरु नहीं पूजा जाता। किसी ने सच कहा है—

गणपति का रूप बनाइ के पीली माँटी पुजवाई।

महाराष्ट्र के नगरों में गणपति-चतुर्थी के दिन 'गणपति' ईश्वर को भूलकर मिट्टी के खिलौने बचेने वाली स्त्रियाँ चिल्लाती फिरती हैं। गणूं ध्या, गणूं ध्या (गणेश जी को मोल ले लो। गणेश जी को मोल ले लो)। इस अविद्या की कोई सीमा है ?

स्वा० सनातनानन्द जी—यदि जीवित माँ-बाप की सेवा करें और मृतकों का श्राद्ध भी करें तो कैसा ?

पं० सुधासिन्धु—आधा पुण्य और आधा पाप। आधा सार्थक और आधा निरर्थक। क्या एक सच बोलने से दूसरा झूठ सच हो जायगा ? आधा सेर घी में पाव भर मिट्टी का तेल मिलाने से तेल घी तो न होगा। घी को भी बिगाड़ देगा।

महात्मा जी—आज की सभा समाप्त ! विचार कीजिये। जो उचित समझ पड़े उसे कीजिये। हम लोग तो सत्य के खोजक हैं।

Scanned by CamScanner

आठवीं सभा

वर्णाश्रम धर्म

आज सभा की आठवीं बैठक हैं। यथापूर्व नर-नारियाँ सभा में भाग लेने के लिये बड़ी उत्सुकता से पधारी हुई हैं। महात्मा जी यथानियम उच्चासन पर विराजमान हैं। अभी यह निश्चय नहीं हो पाया किस विषय पर विचार हो ? महात्मा जी इस विषय में हस्तक्षेप नहीं करते। वह श्रोताओं की रुचि पर ही छोड़ देते हैं। महात्मा जी का कहना है कि ईश्वर ने हर पुरुष को बुद्धि दी है। इसी बुद्धि के सहारे वह चलता, फिरता, खाता, पीता, संसार के सब काम करता और इसी बुद्धि के सहारे वह ईश्वर को पहचानता और अपने परलोक की बातें सोचता है। इसलिये बुद्धि सबसे बड़ा गुरु है। सबसे बड़ा आचार्य है। सबसे बड़ा ऋषि है। मनुष्य स्वार्थ, प्रमाद और अभिमान में फँस कर दूसरों को धोखा दे सकता है। परन्तु बुद्धि किसी को धोखा नहीं देती। अतः बुद्धि से काम लेना ही मानव धर्म है। लकीर के फकीर होकर बिना जाँचे दूसरों के पीछे लग लेना मनुष्यता नहीं, अपितु भेड़पन है।

जब सब लोग अपने-अपने मन में भिन्न-भिन्न बातें सोच रहे थे तो श्री अश्वकेतु जी ने उठ कर कहा—

'क्या मुझे बोलने की आज्ञा है ?'

महात्मा जी—क्यों नहीं ! अवश्य कहिये।

Scanned by CamScanner

श्वेतकेतु——भगवन् ! कल हमारे यहाँ कुछ क्षत्रिय, ब्राह्मण ादि उच्च जातियों के लोग बैठे हुये थे। सनातन धर्म की बात ल पड़ी। पण्डित अद्भुतानन्द शुक्ल को तो आप जानते ही हैं?

चुनुआ—हाँ ! जानते क्यों नहीं। वह जो लम्बे-लम्बे तिलक गाते हैं। और खड़ामुओं पर चलते हैं।

अश्वकेतु—जी हाँ! वह श्वास भर कर कहने लगे। क्या धर्म ी बात करते हो? आजकल धर्म है कहाँ? राजा परीक्षित के मुकुट में जब से कलियुग ने प्रवेश किया सब धर्म नष्ट हो गया। आजकल ो चमार, भंगी, ठाकुर, ब्राह्मण सब एक हो रहे हैं। सर्वत्र भ्रष्टाचार ो रहा है।

मलूकदास—इसमें भ्रष्टाचार की क्या बात है ? तुलसीदास ने ो पहले ही लिख दिया था—

कर्म प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करै सो तस फल चाखा॥

सब मनुष्य अपने कर्मों से ऊँच नीच होते हैं। जाति पाँति से नहीं।

जाति पाँति पूँछे नहिं कोई।
हरि को भजे सो हरि का होई॥

पं० सनातनानन्द जी—अजी, आप तो हैं वैरागी। वैरागियों की कोई जाति नहीं होती। परन्तु गृहस्थ लोगों में ऊँच-नीच का विचार आवश्यक है। सनातन से ब्राह्मण क्षत्रिय आदि के बड़े-बड़े कुल चले आ रहे हैं। ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुये हैं, क्षत्रिय भुजाओं से, वैश्य जाँघों से और शूद्र पैरों से। शूद्र ब्राह्मण कैसे हो सकते हैं और ब्राह्मण शूद्र कैसे हो सकते हैं ? क्या मुँह पैर हो सकता

Scanned by CamScanner

है ? क्या पैर मुँह हो सकता है? सबको एकमयी कर देना घो अधर्म है।

श्री सुधासिन्धु जी—क्या मैं कुछ पूछूँ ?

सब लोग—हाँ ! पूछिये सभा इसीलिये है ?

श्री सुधासिन्धु जी—सृष्टि उत्पत्ति का तो एक सा नियम है सभी माता पिता के संयोग से उत्पन्न होते हैं। जन्म की विधि भ एक सी है।

सुरतिय, नरतिय, नाग तिय, दुःख सहै सब कोय।

क्या आजकल किसी ब्राह्मण को मुख से पैदा होते सुना है या किसी क्षत्रिया को भुजाओं से ? मुँह, भुजा, जाँघ या पैर मे गर्भाशय तो होता नहीं। फिर उत्पत्ति कैसी ?

पं० सनातनानन्द जी—यह इस सृष्टि की बात नहीं है। ब्रह्म की रची हुई आदि सृष्टि की बात है। श्री सुधासिन्धु जी ! आय समाजियों के तर्क से काम नहीं चलेगा। यह है सनातन धर्म की बात।

श्री सुधासिन्धु जी—क्या इसी को सनातन धर्म कहते हैं कि कभी ब्राह्मण मुख से पैदा हो और कभी गर्भाशय से। ब्रह्मा को यही अभीष्ट था कि ब्राह्मणों की उच्चता स्थापित रखने के लिये उनको गर्भाशय से उत्पन्न न किया जाय तो ब्राह्मणों की ऐसा जाति विशेष होनी चाहिये थी कि ब्राह्मण लोग अपने पिता या माता के मुख से पैदा हुआ करते। क्षत्रिय भुजाओं से। वैश्य जंघाओं से। शूद्र पैरो। परन्तु ऐसा न कभी हुआ, न होगा। यह सनातन धर्म नहीं। कल्पित धर्म है। गपोड़ा है। न प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध है, न अनुमान से।

Scanned by CamScanner

पं० सनातनानन्द जी—वेद में लिखा है। आप वेद से कैसे नकार कर सकते हैं ?

नास्तिको वेद निन्दकः।

श्री सुधासिन्धु जी—वेद में क्या लिखा है ?

पं० सनातनानन्द जी—यही कि ब्राह्मण मुख से पैदा हुये ?

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्।

पं० सुधासिन्धु—इस मन्त्र का अर्थ कीजिये।

पं० सनातनानन्द—(ब्राह्मणः) ब्राह्मण (अस्य) उसका (मुखं) मुख आसीत्) था।

पं० सुधासिन्धु—यहाँ उत्पत्ति तो नहीं लिखी। आप भी यही र्थ करते हैं कि ब्राह्मण उसका मुँह था। यह नहीं कि ब्राह्मण मुख उत्पन्न हुआ। महाराज ! वेद का अर्थ करते समय बुद्धि से भी ो काम लेना चाहिये। क्या ब्रह्मा जी अपने शरीर में चार गर्भाशय लिये फिरते थे ? एक मस्तक में, एक बाहु में, एक जांघ में और क पैर में। ब्रह्मा जी क्या थे ? तमाशा थे। मन्त्र का सीधा अर्थ ह है कि जब सृष्टि रची गई तो पूर्ण ज्ञानी और नेता होने से ाह्मण सबका मुख-स्थानी या मुख्य और पूजनीय बन गया। जिसमें ाहुबल और क्षात्र धर्म की योग्यता हुई वह क्षत्रिय कहलाया। जिसने ांघों के बल व्यापार, कृषि आदि कर्म किये वह वैश्य हुआ। और ो अत्यन्त साधारण मनुष्य हुआ वह शूद्र कहलाया। यह सिद्धान्त ाजकल भी है। और सर्वत्र पाया जाता है। जो ज्ञानी होते हैं वे र्वत्र नेता हो जाते हैं। जैसे महात्मा गांधी।

एक सदस्य—महात्मा गांधी तो बनिये थे, ब्राह्मण नहीं।

प्रो० विज्ञान भिक्षु जी—महात्मा गांधी तो जन्मपरक जातियों

Scanned by CamScanner

पर श्रद्धा नहीं रखते थे। एक बार कचहरी में उन्होंने अपने को जुलाहा लिखाया था क्योंकि वह सूत कातते और खादी बुनते थे वह छूत-छात भी नहीं करते थे। वह भंगियों की बस्ती में रहते थे

पं० सुधासिन्धु जी—सनातन धर्म की जाति-पाँति को आजकल कौन पूछता है ? केवल नाम मात्र रह गया है। आजकल नाम के ब्राह्मण, नाम के क्षत्रिय सभी प्रकार से नीच ऊँच व्यवसाय करते हैं।

पं० सनातनानन्द जी—क्या वर्ण आश्रम की बात सनातन नहीं? झूठी है?

पं० सुधासिन्धु जी—आश्रम विभाग और वर्ण विभाग तो ठीक है। क्योंकि भिन्न-भिन्न लोगों के गुण, कर्म, स्वभाव भिन्न हैं। और सदा बदलते रहते हैं। यह बात सनातन से चली आई है। यही स्वाभाविक है।वाल्मीकि डाकू थे महाकवि हो गये। विश्वामित्र क्षत्रिय थे ऋषि बन गये। अब तो जाति-पाँति के बन्धन स्वयं ही टूट रहे हैं। इसलिये इन बातों पर विचार करना व्यर्थ है। अब तो उन मौलिक तत्वों को समझना चाहिये जिन पर चल कर भूमण्डल भर के सभी मनुष्य धर्मात्मा हो सकें और देश, रंग, जनम, सम्प्रदाय परक भेद भाव छूट जाय।

मौ० रहीम बख्श—हम भी यही चाहते हैं।

पादरी डैविड पाल—हमारा भी यही कहना है।

पं० सुधासिन्धु जी—यदि हम सब हठ-धर्मी और स्वार्थ छोड़कर असली सनातन धर्म की खोज करेंगे और सनातन धर्म के बहाने से जो कुरीतियाँ और कुविचार प्रचलित हो गये हैं उनको छोड़ देंगे तो मतमतान्तर के भेद भी मिट जायँगे। देखो, ऋग्वेद में मनुष्यों

Scanned by CamScanner

के केवल दो विभाग किये हैं—

"विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवः।"

(ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त ५१, मन्त्र ८)

एक आर्य अर्थात् शिक्षित, धर्मात्मा, श्रेष्ठ। दूसरे 'दस्यवः' अर्थात् अशिक्षित, पापी, चोर, डाकू आदि। मनुष्यों के यही दो भेद सनातन अर्थात् सब देशों ओर सब युगों में पाये जाते हैं। आर्य बनो और बनाओ। दस्यु लोगों से बचो और उनके पंजे से सब को छुड़ाओ। यही हम सबका कर्तव्य है।

महात्मा सुनीतकेतु जी—देवियो और सज्जनो ! आज इस सभा की आठ बैठकें हो चुकीं। आप सबने शान्ति से जीवन के आवश्यक सिद्धान्तों पर विचार किया। यह सन्तोष की बात है। अब केवल एक बैठक और होगी। 'सनातन धर्म' ('दीन कदीम' Eternal Religion) के विषय में आप सबको जो कुछ कहना हो अगली बैठक में कहा जाय। इसके पश्चात् इस सभा का विसर्जन कर दिया जाय।

सब लोग सभापति जी को प्रणाम करके चल दिये।

❖❖

Scanned by CamScanner

नवीं सभा

सनातन धर्म रत्नाकर है

आज सभा की नवीं बैठक है। यह अन्तिम बैठक है। अतः आज वह लोग भी आये हैं जो बीच की बैठकों में किसी कारण उपस्थित न हो सके थे। आज एक विशेष बात यह है कि नगर के प्रसिद्ध पण्डित और वृद्ध विद्वान् श्री पं० सदाशिव जी भी पधारे हैं। इनके लाने का श्रेय पं० सनातनानन्द जी को है। श्री सदाशिव जी की आयु ९० वर्ष की हैं, कमर झुक गई है। लाठी टेक कर चलते हैं। उनको कई पीढ़ियों का अनुभव है। श्री सभापति जी ने भी उनका स्वागत किया।

पं० सुधासिन्धु जी—हर्ष की बात है कि श्री सदाशिव जी पधारे हैं। उनके मुखारविंद से हम कुछ सुनना चाहते हैं।

पं० सदाशिव जी—भाइयो ! आप सब नये जमाने के लोग हैं। यह सब तमाशे हमारी आँखों के सामने बीत चुके हैं। इसी नगर में कभी आर्य समाज आया, कभी थियोसोफी आई, कभी विधवा विवाह का जोर रहा। अन्त में वही ढाक के तीन पात। भाई लोगो! सनातन धर्म तो एक समुद्र है। सैकड़ों नदियाँ इसी समुद्र में आकर विलीन हो जाती हैं।

पं० सुधासिन्धु जी—बात तो ठीक है। परन्तु आज बहुत बड़ा प्रश्न यह है कि हमारे समाज मे बहुत सी बुराइयाँ आ गई हैं।

Scanned by CamScanner

इनको कैसे दूर करना चाहिये ? यह तो ठीक है कि सनातन धर्म एक समुद्र है। इसमें आकर बीसियों नदियाँ विलीन हो गईं। परन्तु यह समुद्र है खारा ! मीठे पानी की नदियाँ इसमें गिरकर मीठापन त्याग देती हैं और समुद्र दिन-प्रतिदिन खारी होता जा रहा है। थोड़ा सा इन नदियों पर विचार कीजिये।

कई सहस्र वर्ष हुये। एक 'यज्ञ-युग' का आरम्भ हुआ। बड़े-बड़े यज्ञ होने लगे। संसार का उपकार हुआ। वातावरण शुद्ध हुआ। वेदों का प्रचार हुआ। 'स्वाहा' और 'स्वधा' की ध्वनियों से आकाश गूंज उठा। परन्तु जब यह यज्ञ-रूपी नदी सनातन धर्म के समुद्र में आ पड़ी तो यज्ञ तो बन्द हो गये, कालीमाई और विंध्याचल आदि देवी के मन्दिरों में बकरे मारे जाने लगे। कहीं भैंसों की बलि दी गई। हाहाकार मच गया। कहाँ 'ओ३म् स्वाहा' ! कहाँ 'त्राहिमाम्'। आज देवी-देवते पूजने वाले हिन्दू भी हिंसक हैं और एक अल्लाह के मानने वाले मुसल्मान भी अल्लाह को प्रसन्न करने के लिये गाय या बकरे की बलि देते हैं और इसका नाम ईद रखा है। हिन्दुओं की काली माई तो बकरा ख़ाती है। मुसलमानों के खुदा को भी क्या मांस प्यारा है ? महात्मा बुद्ध की एक नई नदी आई। अहिंसा का प्रचार हुआ। यज्ञ बन्द हुये। पशु बलि से घृणा हुई परन्तु जब तक नदी 'सनातन धर्म' के समुद्र में गिरी तो वेदों का ह्रास हुआ। मूर्तिपूजा और नास्तिकता के क्षार ने क्षीर सागर को 'क्षार सागर' बना दिया। श्री शंकराचार्य जी ने बौद्ध और जैनी नास्तिक मतों का खण्डन किया। परन्तु मायावाद ने आलस्य प्रमाद और अनुचित वैराग्य को जन्म दिया। अपने को ब्रह्म कहने वाले भूत-प्रेतों की पूजा में लिप्त हो गये। आप भले ही हर्ष मनाते रहें कि बीसियों नदियाँ सनातन धर्म

Scanned by CamScanner

के समुद्र में गिरकर विलीन हो गईं। परन्तु **'क्षार जलं का पुरुषाः पिबन्ति'**। तनिक इस खारे समुद्र की ओर दृष्टि डालिये। ईश्वर को मानने वाले सनातनधर्मी, ईश्वर को न मानने वाले नास्तिक सनातनधर्मी, निराकार के उपासक सनातनधर्मी, साकार मूर्तियों के पूजने वाले सनातनधर्मी, पशुपालन सनातनधर्मी; पशु हिंसक सनातनधर्मी; वेदों के प्रशंसक सनातनधर्मी; वेदों के निन्दक सनातनधर्मी; अद्वैतवादी तथा द्वेतवादी सनातनधर्मी हैं।

पं० सदाशिव जी—यही तो गुण है। सनातन धर्म रत्नाकर है। इसमें सभी रत्न मिलेंगे।

पं० सुधासिन्धु जी—रत्नों के साथ मगरमच्छ भी तो हैं।

पं० सदाशिव—हम किसी की निन्दा नहीं करते। हम स्वामी दयानन्द नहीं जिन्होंने सबकी निन्दा की है।

पं० सुधासिन्धु—आप बुराई की भी निन्दा नहीं करते, चोर और डाकुओं की भी निन्दा नहीं करते। मन्दिरों में फैले हुये व्यभिचार और धोखा धड़ी की भी निन्दा नहीं करते। सब धान बारह पसेरी, टका सेर भाजी टका सेर खाजा! आपका कल्पित और निर्धारित सनातन धर्म कोई विशेष आदर्श उपस्थित नहीं करता। किसी सुधार की प्रेरणा नहीं करता ! सुधारों की निन्दा करता है। आलस्य और अकर्मण्यता को बढ़ाता है।

सेठ जगतपाल—पर क्या करना चाहिये ?

पं० सुधासिन्धु जी—वही कीजिये जो स्वामी दयानन्द कहते हैं।

महन्त रामानन्द—बुरों की निन्दा कीजिये। भलों की प्रशंसा कीजिये। शिक्षा का प्रसार कीजिये। कुरीतियों को दूर कीजिये। मूर्तियों

Scanned by CamScanner

की पूजा बन्द कीजिये। एक ईश्वर को पूजिये। जब वेद विद्या का सूर्य उदय होगा तो उसकी किरणें सनातन धर्म रूपी खारे समुद्र में पड़ेंगी। और स्वच्छ जल को भाप बनाकर उड़ावेंगी। क्षार नीचे रह जायगा। स्वच्छ जल धर्म मेघ के रूप में संसार का कल्याण करेगा। वेद सनातन है। उन पर चलना ही सनातन धर्म है, मन माना सनातन धर्म नहीं है।

श्री सभापति जी—अब आपको धन्यवाद देते हुये हम सभा को विसर्जित करते हैं। आप सब स्वतन्त्रता से विचार करें। जो सत्य जान पड़े उसको ग्रहण करें। किसी की किसी पर जबरदस्ती नहीं है। हर एक को सत्य निष्ठ होना चाहिये। सत्य पर चलिये।

पं० सुधासिन्धु जी—आपकी आज्ञा से मैं आप सबकी ओर से महात्मा सुनीतिकेतु जी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने हमारा पथ-प्रदर्शन किया।

मौलवी रहीम बख्स—दर हकीकत! हम सब मश्कूर हैं, दिल से मश्कूर हैं। सुबहान अल्लाह। कैसी-कैसी बे नजीर चीजें सुनने को मिलीं।

चश्मे मा रोशन। दिले मा शाद।

(आँख में रोशनी आ गई। दिल खुश हो गया)

पं० सनातनानन्द जी—सब मिल कर बोलो—

सनातन धर्म की जय ! वैदिक धर्म की जय !

सर्वे सुकृतिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरागसः।
सर्वे भद्राणि कुर्वन्तु मा कश्चिद् दुःखदो भवेत्॥

❖❖

Scanned by CamScanner